कोरोना टाइम्स

अयोध्या से अनसुनी कहानियाँ

(सर्वहारा शारीरिक रूप से करीब आए ताकि
अमीर सामाजिक दूरी बना सके।)

कोरोना टाइम्स

अयोध्या से अनसुनी कहानियाँ

(सर्वहारा शारीरिक रूप से करीब आए ताकि अमीर सामाजिक दूरी बना सके।)

महिपाल मोहन
जुहेब जॉनीH

SRUTI

Any part or whole of this document may be reproduced for non-commercial purposes provided due credit is given to the author and publisher.

© SRUTI

First Published 2024

SRUTI

For Internal Purposes Only

Published by

SRUTI
103/4 Sona Apartments, Kaushalya Park,
Hauz Khas, New Delhi -110016
Phone: 011 26964946, 26569023

E-mail: core@sruti.org.in
Web :www.sruti.org.in

Images by Mahipal Mohan

Printed in India by Anuugya Books, New Delhi

कोरोना टाइम्स : अयोध्या से अनसुनी कहानियाँ
महिपाल मोहन, जुहेब जॉनी

विषय-सूची

निदेशक की ओर से...	7
प्रस्तावना	9
परिचय	11
कूड़ा बीनने वाले मज़दूर	15
घरेलू कामगार	24
पावरलूम मजदूर	31
प्रवासी मजदूर	42
रेहड़ी-पटरी विक्रेता	51
घरेलू श्रम करने वाले	56
अनौपचारिक क्षेत्र के कुशल श्रमिक	62
संक्षेप में	71

निदेशक की ओर से...

कोविड-19 महामारी का समय वैश्विक आपदा के रूप में दुनिया भर के लिए सबसे चुनौतीपूर्ण समय रहा। महामारी के दौरान यह स्पष्ट हो गया कि स्वास्थ्य, गवर्नेंस, सामाजिक-आर्थिक पहलुओं पर अब भी वैश्विक स्तर पर तैयारियों में कितनी कमी है। महामारी का सबसे ज़रूरी सबक था कि मौजूदा व्यवस्था इस स्तर की आपदा से निपटने में सक्षम नहीं है। इसलिए ऐसी विकट स्थितियों से निपटने के लिए वैश्विक स्तर पर साझा रणनीतियों और सहयोग को साथ लाने की ज़रूरत है। वैश्विक आपदा के संकट से यह भी समझ आया कि वैश्वीकरण ने जहां वैश्विक स्तर पर वित्तीय, सामाजिक और भू-राजनीतिक विनिमय-साझेदारी को प्रभावित करने में अपनी भूमिका अदा की है, वहीं उतने ही व्यापक स्तर पर कोविड महामारी के रोग-संचरण में भी अपना योगदान दिया है।

महामारी के अभूतपूर्व संकट के समय में पूरे देश में लंबे समय तक कड़े लॉकडाउन लगे रहे। इतने लंबे समय तक चलने वाले लॉकडाउन ने असंगठित क्षेत्र को बुरी तरह प्रभावित किया। लॉकडाउन के दौरान 'महामारी को असमानता की बीमारी' साबित करते हुये प्रवासी मज़दूरों और श्रमिकों की भूख, गरीबी, स्वास्थ्य-सेवाओं में कमी और भेदभाव के बेहद पीड़ादायी अनुभव-दृश्य सामने आए। भारत में दिहाड़ी पर काम करने वाले लाखों प्रवासी मज़दूरों ने मेट्रो कहे जाने वाले बड़े शहरों से वापस छोटे शहरों और ग्रामीण इलाकों में अपने घरों की ओर पलायन किया।

महामारी के इस असाधारण संकट के दौरान जन-संगठनों से लेकर नागरिक समाज तक के राहत के काम में लगे असाधारण सामूहिक

प्रयासों के दिलासा देने वाले अनुभव भी रहे। आपसी सहयोग से राहत-कार्य में लगे इन अनुभवों ने सामूहिकता और साझा प्रयासों के प्रति लोगों का भरोसा मज़बूत किया।

यह किताब श्रुति टीम के सदस्यों जुहेब जॉनी और महिपाल मोहन द्वारा एकत्रित की गई छत्तीस कहानियों का संकलन है, जो लॉक-डाउन से पहले और उसके दौरान मज़दूर वर्ग के जीवन की अनकही पीड़ा को उजागर करती है। यह संकलन महामारी के दौरान लोगों की जिजीविषा और सामूहिकता के अनुभवों के साथ-साथ उम्मीदों का भी दस्तावेज़ है।

उत्तर प्रदेश के फैजाबाद शहर में महामारी के दौरान राहत के अथक प्रयासों के लिए अवध पीपुल्स फोरम को सलाम! यह किताब उनके कार्य क्षेत्र से ही संकलित साक्ष्यों का संग्रह है। मार्टिन लूथर किंग ने कहा था, "हमें अपनी निराशाओं-असफलताओं के प्रति तैयार रहना चाहिए, लेकिन बेहतर समय का भरोसा कभी नहीं छोडना चाहिए" - अवध पीपुल्स फोरम के साथियों को धन्यवाद, जिनके परिवर्तन और न्याय में असीम भरोसे ने हमें फ़ैज़ाबाद की झुग्गी-बस्तियों में रहने वाले मजदूर वर्ग की अनसुनी कहानियों के संकलन की प्रेरणा दी।

हमें विश्वास है कि यह किताब फैजाबाद शहर के उपेक्षित झुग्गी-बस्तियों में रहने वाले मज़दूर वर्ग की चिंताओं और मुद्दों पर समझ बनाने में सक्षम होगी, जो अपनी असीम सहनशक्ति और जिजीविषा के साथ महामारी की अफरातफ़री के वक़्त बुनियादी सुविधाओं से भी वंचित होने के बावजूद संघर्ष की भूमिका में बने रहे और फ़ैज़ाबाद शहर के निर्माण-रखरखाव में अब भी अपना योगदान निभा रहे हैं।

श्वेता

प्रस्तावना

कोरोना महामारी ने पूरे विश्व को संकट की स्थिति में लाकर खड़ा कर दिया है। इस महामारी से सिर्फ भारत के मजदूरों नहीं बल्कि दुनिया भर में भी मजदूरों की स्थिति प्रभावित हुई है। भारत में बिना किसी पूर्व योजना के लगाये गये लॉकडाउन का असर मजदूर वर्ग पर सबसे ज्यादा हुआ – जिसका ज़िक्र भारतीय मीडिया और टी.वी. चैनलों ने अपने अनुसार किया – खासकर उत्तर प्रदेश की मीडिया जिसने इतनी भी जहमत नही उठाई कि कम से कम प्रभावित मजदूरों की स्थिति के संदर्भ में सही-सही जानकारी दे पाएं।

इस तथ्य से कोई भी अंजान नही है कि कोरोना महामारी से पूरी दुनिया प्रभावित हुई है, जिसके तहत पूरी दुनिया के स्वास्थय, और सामाजिक-आर्थिक स्थितियों पर भी बुरा असर हुआ है। अगर हम भारत के संदर्भ में बात करे तो स्थिति बहुत दयनीय रही है। खासकर फैजाबाद के मजदूरों के लिए भी वैसी ही हालत लगातार ही बनी रही है।

लॉकडाउन लागू होने से जो संकट पैदा हुआ वो नवंबर 2016 में 1000 और 500 रुपये के नोटों के नोटबंदी के बाद आई उथल-पुथल के समान था। तब भी श्रमिक वर्ग को सबसे अधिक नुकसान उठाना पड़ा और इसे 2020 में फिर से दोहराया गया। फैजाबाद (अयोध्या) के लोग इस तरह के संकट के आदी नहीं हैं क्योंकि जब सांप्रदायिक तनाव के कारण तालाबंदी लागू की गयी थी तो उन्हें इस तरह के कर्फ्यू का सामना करना पड़ा था।

लॉकडाउन अवधि के दौरान, भेदभाव, भूख और गरीबी के परेशान करने वाले दृश्य आम हो गये क्योंकि समाज उदासीनता से घिरा हुआ था। लोगों को भुखमरी का सामना करना पड़ा, रोजगार खत्म हो गये,

लोगों को राशन की कमी, न्यूनतम स्वास्थय सेवाओं एवं देखभाल का अभाव झेलना पड़ा, लोग अपने परिजनो के अंतिम संस्कार तक में भी शामिल नही हो पाये।

दूसरी तरफ हमने यह भी देखा कि लोगो ने व्यक्तिगत तौर पर कोरोना प्रभावित लोगो की मदद की है एवं कई स्वंयसेवी संस्थान एवं निजी संस्थानों ने भी कोरोना प्रभावित क्षेत्रों एवं लोगों की सहायता की है। कोविड-19 ने हमें एक महत्वपूर्ण सबक सिखाया है कि सामूहिक प्रयासों से ही हम एक बेहतर समाज की स्थापना कर सकते हैं जबकि व्यक्त्विादी सोच हमें एक बेहतर समाज के निर्माण में हमेशा बाधक होगी।

अक्टूबर 2020 के एक मंथन सत्र के दौरान हमारे मन में फ़ैज़ाबाद के श्रमिक वर्ग के लोगों की स्थिति के दस्तावेजीकरण करने का विचार आया – जो कोरोना वायरस के कारण लगे लॉकडाउन के दौरान बाधाओं के खिलाफ संघर्ष करते रह रहे थे। नवंबर 2020 से मार्च 2021 तक हमने दो बार फैजाबाद का दौरा किया और 60 से अधिक लोगों से बातचीत की। उनमें से हमने लॉकडाउन से पहले और उसके दौरान लोगों के जीवन की 39 कहानियाँ संकलित की हैं।

अवध पीपुल्स फोरम, फैजाबाद, उत्तर प्रदेश ने श्रुति, (सोसाइटी फॉर रूरल अर्बन एंड ट्राइबल इनिशिएटिव) के साथ सहयोग किया और अपने क्षेत्र से साक्ष्य एकत्र करने में मदद की। हम उन सभी को उनके समर्पित मार्गदर्शन और सौहार्द के लिए धन्यवाद देते हैं – जिसने इसे संभव बनाया।

जब हम वापस मुड़कर इन कहानियों को देखते हैं, तो हमें अपने समय की गहरी असमानताओं की याद आती है। हम एक ऐसे सामूहिक भविष्य की आशा करते हैं जहां बड़े पैमाने पर सर्वहारा वर्ग – इस विशाल देश का एक बड़ा हिस्सा – अपने दैनिक जीवन में इतना असुरक्षित न हो, और हमारे शासक वर्ग उनकी बात सुनना, उनकी देखभाल करना और कार्य करना सीख सकें।

15 मार्च, 2022 **महीपाल मोहन**

हौज़ खास, दिल्ली **जुहेब जौनी**

परिचय

फैज़ाबाद शहर का अधिकारिक नाम अब अयोध्या हो गया है। हर एक भारतीय – चाहे वह कभी अपनी जीवन में अयोध्या ना आया हो – परन्तु उसके जीवन पर अयोध्या का एक प्रभाव जरूर है। करीब पिछले तीन दशकों में कुछ दक्षिण भारतीय राज्यों और पूर्वोतर क्षेत्रों को छोड़कर लगभग सभी ने चुनावों के दौरान इस शहर का नाम सुना है। बाबरी मस्जिद और राम मन्दिर के घटनाक्रम के चलते यह क्षेत्र हमेशा ही चुनावों के दौरान चर्चा का विषय रहा है। हालाँकि कोरोना महामारी के दौरान जहाँ पूरा देश इस महामारी से जूझ रहा था और अपनी जिंदगियों के लिए लड़ रहा था, वहीं पर दूसरी तरफ बाबरी मस्जिद विंध्वस केस में न्याय की सभी उम्मीद को कुचलते हुए राम मंदिर के उद्घाटन की तैयारियां की जा रही थी। कार्ल मार्क्स ने सही ही कहा है कि धर्म जनता के लिए अफीम है।

अगर कोई पूछता है कि वास्तव में अयोध्या के लोग कौन है – क्या मुख्यतः ये मजदूरों का शहर है जिनके खून-पसीने से यह शहर बना है और चल रहा है? तब यह निष्कर्ष निकालना बिल्कुल भी मुश्किल नही होगा की अयोध्या का मजदूर वर्ग चाहे महिला हो या पुरुष – उनका श्रम और ज़िन्दगी का हमेशा की राजनैतिक कारकों के चलते इस्तेमाल हुआ है। कोरोना वायरस ने बहुत बड़ी संख्या में मजदूर वर्ग को प्रभावित किया है। इस महामारी के चलते मजदूरों की अजीविका पर इतने नकारात्मक प्रभाव हुए कि लोग अपनी रोजमर्रा की जरूरतें पूरी करने के लिए भी महोताज हो गये। बाजारों में होने वाले रोज के लेने-देने पर भी असर पड़ा है जिसके चलते पूरे छोटे बाजार बर्बाद हो गये है।

देश की सरकार ने कोरोना महामारी को फैलने से रोकने के लिए सख्त लॉकडाउन लगाया, इस लॉकडाउन के चलते लोगो की अजीविका बर्बाद हो गयी लोग अपने परिवार का भरण पोषण करने में असमर्थ होने लगे। फैजाबाद शहर में रहने वाले मजदूरों में कचरा बीनने वाले मजदूर, घरेलू कामगार, बुनकर, दिहाड़ी मजदूर, रेहड़ी पटरी वाले, घरेलु कामगार करीब-करीब पूरे मजदूर वर्ग किसी ना किसी तरीके से लॉकडाउन से प्रभावित हुए है। प्रवासी मजदूरों की जिंदगी उस समय ताक पर रख दी गयी जब लॉकडाउन के दौरान मजदूरों को अपने-अपने गांव अकेले पैदल जाने के लिए छोड़ दिया गया।

घरेलू कामगार अचानक लगे लाकॅडाउन के चलते अपनी मार्च महीने की तन्ख्वाह भी नही ले पाए क्योकि आवाजाही बंद हो गयी थी। इन मजदूरों के बच्चें अभावों के चलते नई शिक्षा व्यवस्था में ख़ुद को जोड़ नही पाये क्योंकि सभी स्कूलों में शिक्षा आनलाइन प्रनाली से हो रही थी – जिसके लिए बच्चों के पास स्मार्ट फोन, इन्टरनेट पैक सब जरूरी था। यह वर्ग ऐसा था जो कि पहले से ही अभाव में अपना जीवन जी रहे थे। इस सूरत में स्मार्ट फोन और आनॅलाइन क्लास लेना इन सबके लिए बहुत मुश्किल था। लॉकडाउन की इस अवधि के दौरान महिलाओं को घरेलू हिंसा का भी शिकार होना पड़ा, और ऐसी स्थिति में कई परिवार टूटे एवं मानसिक तनाव से ग्रसित हो गये। उत्तर प्रदेश सरकार ने बुनकरों को मिलने वाली छुट को पहले खत्म कर दिया था जिससे बुनकरों की स्थिति और ज्यादा दयनीय हो गयी।

देशव्यापी लॉकडाउन लगने के बाद छोटे बुनकरों का काम लगभग खत्म हो गया, इन मजदूरों का यह सपना की वह अपने काम को ज्यादा व्यापक बना पायेगें लगभग खत्म ही हो गया। इस क्षेत्र में रोजगार के सुनहरे अवसर थे जोकि बिजली के बिल मे होने वाले संशोधन के चलते खत्म हो गये। वर्तमान स्थिति में बहुत से बुनकर मजदूर सड़कों पर रेहड़ी पटरी लगाने के लिए विवश हो गये हैं।

रेहडी पटरी विक्रेताओं की स्थिति भी अन्य मजदूरों की तरह ही

दयनीय है। असंगठित क्षेत्र के तहत आने वाले रेहरी-पटरी रोजगार मुख्यतः शहरों और गांव के बीच लोगो का प्रवास है। ज्यादातार मजदूरों जिन स्थानों पर यह मजदूर काम करते है वहां उनके पास अपनी जमीन और घर नही है। यहाँ तक की जिन छोटे वाहनों तीन-पहिये वाले रिक्शो पर यह मजदूर अपना सामान रख कर बेचते है वह भी किराये की होती है। लाॅकडाउन के दौरान अन्य मजदूरों की तरह इन मजदूरों के रोजगार और धन्धे भी पूरी तरह से ठप हो गये थे इनके पास आमदनी का कोई स्त्रोत नही था बावजदू इसके मकान मालिकों ने इन मजदूरों से किराया वसूलने में जरा भी कोताही नही बरती, जबकि केन्द्र सरकार ने मकान मालिकों से अपील की थी कि वह अपने किरायेदारों से जबरन किराया ना वसूलें।

असंगठित क्षेत्र के तहत काम करने वाले मजदूर हमेशा ही हाशियें पर रहें है, इन मजदूरों के लिए सामाजिक सुरक्षा सिर्फ एक दस्तावेज है जमीनी स्तर पर यह योजना नदारद है। देशव्यापी लॉकडाउन के दौरान उन मजदूरों की स्थिति ज्यादा दयनीय हुई जो मजदूर बहुत कम वेतन की एवज में काम करने के लिए मजबूर थें। महामारी के दौरान संक्रमण के डर से कई मजदूरों का प्राथमिक रोजगार खत्म हो गया एवं मजदूरों को अपनी जीविका चलाना भी मुश्किल हो गया है।

इस दस्तावेज में हमने फैज़ाबाद, उत्तर प्रदेश के मजदूरो के संघर्षो एवं चुनौतियों का सकंलन करने का प्रयास किया है। इस दस्तावेज में हमने न सिर्फ लाॅकडाउन के दौरान मजदूर वर्ग के हितो से संबधित मांगो को जोड़ा है बल्कि श्रम कानूनों एवं सामाजिक सुरक्षा अधिकार जो कि पहले मौजूद है उनको भी जोड़ने का प्रयास किया है।

अध्याय -1

कूड़ा बीनने वाले मज़दूर

कूड़ा बीनने का काम बेहद ही चुनौतीपूण एवं अमानवीय है। कूड़ा बीनने वाले मजदूरों का दैनिक जीवन हमारे घरों से निकलने वाले दूषित कूड़े के इर्द-गिर्द ही घूमता है। कूड़ा निपटान के काम को ना तो समाज द्वारा सम्मान और ना ही सरकार द्वारा इनके काम को मान्यता प्राप्त है। एक स्वंय सेवी संगठन इडो ग्लोबल सोशल सर्विस सोसाइटी द्वारा किये गये अध्ययन से पता चलता है कि भारत में कुल 1.5 मिलियन से लेकर 4 मिलियन तक मजदूर कूड़ा निपटान के काम लगे हुए है, जोकि सड़कों और गलियों से कचरा बीनने, गोदाम पर कूड़ा छांटने एवं पुनः प्रयोग के लायक बनाने की प्रकिया में लगे हुए है। इन मजदूरों द्वारा भारत में सालाना निकलने वाले 62 मिलियन टन (6200 करोड़ किलो) कचरे में से करीब 56 प्रतिशत कचरे को वापस प्रयोग होने योग्य बनाते है। कचरा बीनने के काम में लगे ज्यादातर मजदूर निम्न एवं आर्थिक रूप से कमजोर तबके से आते हैं, जोकि सामाजिक, राजनैतिक और आर्थिक रूप से शोषित है। इन मजदूरों का पूरा परिवार कूड़ा निपटान की प्रकिया में विभिन्न स्तरों पर काम करता है जैसे कूड़े को एकत्रित करना, छंटाई करना एवं छटे हुए कबाड़ को बेहतर दामों पर बेचना। इन मजदूरों की बस्तियां शहरों के बाहरी हिस्से में बनी होती है, उन बस्तियों में जीवन जीने लायक बुनियादी सुविधाओं का भी अभाव होता है, जैसे पीने का पानी, शौचालय, स्वास्थय सेवायें आदि। यह परेशानियां उस समय और ज्यादा बढ़ जाती है जिस समय इन्हें सरकारी आदेशों के

अनुसार विस्थापित कर दिया जाता है। जहाँ पर इन मजदूरों को फिर से विस्थापित किया जाता है पहले इन्हें उस स्थान को रहने लायक बनाना पड़ता है।

अयोध्या के हंसू कटरा इलाके में करीब पिछले 9 सालों से 36 परिवार रहे हैं। इस इलाके में सबसे पहले करीब 2011 में अब्दुल बशीर नाम का ठेकेदार आया इसके बाद बाकी परिवार आये। ज्यादातर परिवार असम राज्य के बरपेटा जिले से प्रवासी मजदूर है एवं मिया मुस्लिम समुदाय से संबंध रखते है। यह मजदूर अपने राज्यों से उत्तर प्रदेश राज्य में जीविका की तलाश में आये थे, परन्तु काम ना मिलने की वजह से इन्हें अंत में कूड़ा निपटान के काम में लगना पड़ा।

यह काफी सालों से यही पर रह कर कूड़ा बीनने का काम कर रहे हैं और कभी-कभार ही अपने पैतृक स्थानों पर जाते है। इसकी वजह यह है कि इन्हें नियमित काम नहीं मिल पाता, क्योंकि एक दिन भी काम ना करने के कारण होने वाला आर्थिक नुकसान इन्हें गरीबी की खाई को और बढ़ाता है। अफजल नाम का व्यक्ति अभी हाल ही में असम से काम की तलाश में उत्तर प्रदेश आया परन्तु उन्हें ऐसा कोई रोजगार नही मिल रहा है जिसमें इन्हें सम्मानजनक वेतन मिल सकें। लगभग ऐसी ही स्थिति महिलाओं के रोजगार के संबंध मे भी है महिलाओं को भी रोजगार नही मिल पा रहा है।

कचरा बीनने वाले मजदूर शहरों में उत्पन्न कूड़े का निपटान करने में एक अहम भूमिका निभाते है बावजूद इसके इन मजदूरों का कूड़ा निपटान प्रकिया में किसी भी प्रकार की औपचारिक भूमिका नही है, जिसके चलते इन मजदूरों की केन्द्र सरकार द्वारा अचानक घोषित लाॅकडाउन में स्थिति ज्यादा खराब हो गयी। शुरूआती दौर में लगे लाॅकडाउन के दौरान यह मजदूर खाने और दूसरी जरूरी जरूरतों से भी वंचित हो गये, क्योकि कूड़ा निपटान के काम में लगे मजदूर रोजाना के आधार पर काम करते है एवं इनके पास कोई जमा पूंजी नही होती है। लॉकडाउन के दौरान लगभग सभी काम धन्धों पर रोक लग गयी

थी जिसका असर इनके रोजगार पर पड़ा, एक तरफ तो इन मजदूरों को कबाड़ बीनने में परेशानियों का सामना करना पड़ रहा था वहीं दूसरी तरफ यदि थोड़ा बहुत कबाड़ मिल भी जाता तो उसको बेचने के लिए दूसरे बड़े गोदाम बंद थे, जहाँ पर यह अपने द्वारा बीना हुआ माल बेच सके।

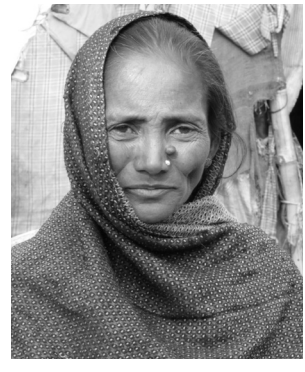

अनवारी बेगम की उम्र लगभग 60 साल है। ये एक छोटी सी झुग्गी बस्ती में रहती हैं जिसका किराया भी दो हजार रुपया अदा करना पड़ता है, जिसे घर कहना भी शायद नाइंसाफ़ी होगी। मानव सुविधा के नाम पर यहाँ मात्र बिजली का कनेक्शन ही है। इनका पूरा परिवार कबाड़ बीन कर अपना जीवन यापन करता है। अनवारी जी कहती हैं कि पूरे दिन के काम के बाद महज पाँच सौ रुपये तक की कमाई ही हो पाती है। इतने पैसों में परिवार चलाना बहुत ही मुश्किल है।

लॉकडाउन की घोषणा के बाद वो काम के लिए बाहर नहीं जा सके और कमाई के सारे साधन बंद हो गये। इनके बच्चे कई दिन भूखे ही रहे। लेकिन इस बीच अवध पीपुल्स फोरम ने मदद की। अनवारी जी बताती हैं कि कुछ लोगों ने हमारे बच्चों की शिक्षा का खर्च उठाने में भी मदद की। वोआगे बताती हैं कि उन्होनें अपने जीवनकाल में कभी इस तरह का कर्फ्यू नहीं देखा था, और उम्मीद करती हैं कि आगे यह कभी नहीं दोहराया जाएगा।

रोहितुन नेसा एक छोटी सी बस्ती में रहती हैं। इनका पूरा परिवार यहाँ कबाड़ बीनने का काम करता है। रोहितुन कहती हैं की इस कोरोना ने गरीब लोगों के दुःख का बहुत बड़ा मजाक बनाया। हमारी सरकार गरीब और अमीर दोनों में बहुत भेदभाव करती है। लॉकडाउन के समय

गरीबों को परेशान किया गया, मारा-पीटा गया, जबकि अमीरों को महामारी के दौरान उबरने के लिए सभी सुविधाएं दी।

इनकी आजीविका दिनभर के काम और उससे होने वाली कमाई पर निर्भर है। लेकिन ये जब भी काम के लिए बाहर निकले तो इन्हें पीटा गया। सरकार का प्रतिनिधित्व करने वाले लोग केवल मदद के नाम पर कुछ खिचड़ी लेकर आए थे जो दो लोगों के परिवार के लिए भी कम था। वह कहतीं हैं कि सरकार कभी भी हम श्रमिक के दुख को गंभीरता से नहीं लेता है।

मनोज लोगों के घर घर जाकर कबाड़ जमा कर उसको बेचने का काम करते हैं। जिससे दिन भर में लगभग 200 से 300 रुपए की आमदनी हो जाती है। उनका पूरा परिवार एक छोटे से किराए के घर में रहता है। इनके चार बच्चे हैं जो पास के ही निजी स्कूल में पढाई करते हैं। लॉकडाउन में स्कूल बंद होने के बाद सारी पढाई ऑनलाइन हो गयी,

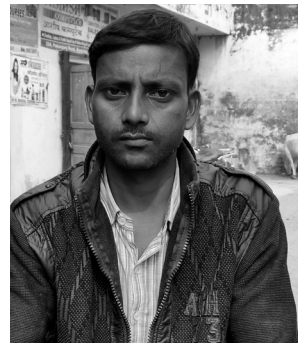

उनके पास स्मार्टफोन खरीदने के लिए पर्याप्त पैसे नहीं थे जिसके कारण इनकी बच्चों कि पढाई रुक गयी है। मनोज आगे बताते हैं कि इस देशव्यापी बंद के कारण उनके पास काम नहीं था जिसके कारण वो और उनका परिवार दो वक्त के भोजन के बजाय एक वक्त का भोजन करके ही जीवित रहने के लिए मजबूर हुए हैं।

नजरूल असम के एक छोटे से गाँव से बेहतर आजीविका कि तलाश में सब कुछ छोड़कर फैजाबाद आए। नज़रुल बताते हैं कि यहाँ आकर

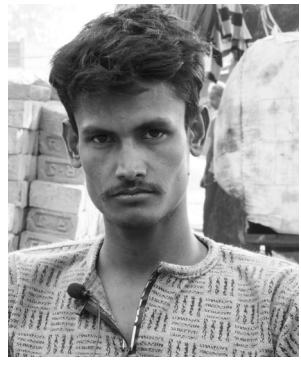

उनका जीवन एक कचरे के ढेर में फंस कर बर्बाद हो गया। जब लॉकडाउन लगा उन्होनें सोचा कि यहाँ भूखे ही मर जाऊँगा इससे तो बेहतर है कि गाँव वापस चला जाऊँ। लेकिन बंद के कारण रेल-बस कुछ भी नहीं चल रहा था। और पैदल गाँव वापस जा पाना असंभव था। नज़रुल आगे कहते हैं कि उन्होनें इस तरह के लॉकडाउन की कभी सपने में भी कल्पना तक नहीं की थी। इन्हें इस बात का कोई अंदाजा नहीं था कि सब लोग संकट की पूरी स्थिति से कैसे निकाल पाएंगे। वह आज भी यह प्रार्थना कर रहे कि सरकार इस तरह का बंद आगे कभी ना करे। यह लॉकडाउन इनके लिए किसी मौत के खतरे से कम नहीं था।

सोहर फैज़ाबाद शहर के एक शोरूम में साफ सफाई का काम करते हैं। उनकी पत्नी कबाड़ बीनने का काम करती है, जिसमें सोहर भी अपनी पत्नी की मदद करते हैं। उनका परिवार भी इसी झुग्गी बस्ती में एक किराए के घर में रहता है। सोहर असम के रहने वाले हैं, बेहतर आजीविका कि तलाश में अपना गाँव छोड़ कर इस शहर में आए थे। सोहर बताते हैं कि लॉकडाउन के दौरान उनका जीवन बहुत मुश्किल में था। उनके पास कुछ भी जमा-पूंजी नहीं थी। अपना घर खर्च चलाने के लिए उनको अपने दोस्तों और रिश्तेदारों से बहुत सारे पैसे उधार लेने पड़े।

पहले लॉकडाउन के चौदह दिनों तक जब कोई काम नहीं मिला तो वह बाहर निकल कर कचरा बीनने गये। तभी रास्ते में उन्हें पुलिस ने रोक

दिया और वापस जाने को कहा। उन्होने पुलिस और उन अधिकारियों को समझाने की बहुत कोशिश की ये कहते हुए कि उनके पास खाने-पीने के लिए कुछ नहीं है, अगर वो बाहर जाकर काम नहीं करेंगे तो उनके बच्चे भूख से मर जाएंगे। लेकिन फिर भी उनको जाने नहीं दिया गया। उनको शिकायत है कि सरकार ने उनके लिए जरूरी राशन की व्यवस्था भी नही की, वरना कोरोना के समय में अपने घर से बाहर निकलने के लिए कभी भी नहीं सोचते। सोहर कहते हैं की अवध पीपल्स फोरम से मिली सहायता के कारण ही वे इस लॉकडाउन के कठिन दिनों से भूख से बच सके हैं।

अब्दुल साल 2011 में नौकरी की तलाश में अयोध्या के पास नबाबगंज आ गये। एक दोस्त की मदद से स्थानीय बाजार में मछली बेचने का काम शुरू किया, लेकिन धंधा चल नही पाया। कुछ समय के बाद अपने एक दोस्त के साथ कबाड़ के व्यापार में लग गये। अभी उनके साथ तकरीबन एक हजार लोग हैं जो असम के हैं। ये सभी लोग फैजाबाद में कचरा बीनने का काम करते हैं। अब्दुल बताते हैं कि वो पहले कचरे से कबाड़ इकट्ठा करते हैं, उसके बाद अलग-अलग बांटने का काम करते हैं, और फिर उसको बेचते हैं। पिछले नौ सालों से यही इनकी दिनचार्य है।

अब्दुल आगे बताते हैं, सरकार द्वारा लॉक डाउन एक बुरे सपने जैसा था। किसी ने सोचा भी नहीं कि इस तरह के बंद से आम लोगों का क्या होगा। जब चौदह दिनों के लिए बंद की घोषणा हुई, हमारे लिए ये एक डरावनी खबर थी। क्यूंकी हम सब अगर एक दिन भी काम पर नहीं जाते हैं तो एक समय के लिए भोजन भी मिल पाना मुश्किल हो जाता है। ऐसे में तो बिना काम के चौदह दिनों तक जिंदा रहने कि सोच

भी नहीं सकते। लेकिन किसी भी तरह लॉकडाउन के पहले चौदह दिन बिताने मैं कामयाब रहे।

परन्तु जब फिर से लॉकडाउन बढ़ाया गया और सारे लोगों को फिर से भूखे मरने के लिए छोड़ दिए गये। इस संकट की घड़ी में स्थानीय एनजीओ मदद के लिए आगे नहीं आए होते तो ये लोग भूख से ही मर जाते। अवध पीपल्स फोरम ही था जो मदद के लिए आगे आया और सूखे राशन, साबुन, तेल, नमक, और हर संभव बुनियादी जरूरत का सामान पहुंचाया।

अब्दुल कहते हैं आज लॉकडाउन के बाद से कबाड़ का सही दाम नहीं मिल पा रहा। अधिकांश चीजों के दामों में काफी कमी आई है जैसे लोहे की कीमत 25 रुपए से घटकर 20 रुपए प्रति किलो हो गयी है, कार्डबोर्ड पहले 13 रुपए प्रति किलो था, लेकिन अब यह सिर्फ 8 रुपए है। सभी चीजों के दामों में 50% तक की कमी आई है। अगर इनकी हालत नहीं बदली तो ऐसा लगता है की ज़िंदा रहना ही मुश्किल होने वाला है।

इस महत्वपूर्ण समय पर सरकार ने इनकी पूरी अनदेखी की। सरकार और उसके नुमाइंदो ने इनसे घृणा रखी और उनको अछूतों जैसा महसूस कराया। आज भी यहाँ अधिकांश लोगों के पास बैंक खाते नहीं है, इसलिए सरकार की कोई भी सहायता प्राप्त करना इनके लिए मुश्किल है।

अरमान अली का परिवार हसनू कटरा के झुग्गी बस्ती मैं रहता है, अरमान अली असम के रोंगिया के रहने वाले हैं, उनके पिता रोंगिया से दस किलोमीटर दूर एक छोटे से गाँव के रहने वाले

थे, जो अपनी घर की जमीन बेचकर अपने ससुराल में आकर बस गये। अरमान अली की माँ को उनकी नानी ने अपनी जमीन में बराबर हिस्सा दिया था क्योंकि असम के मुस्लिम समुदाय में हिला और पुरुष दोनों को ही घर की जमीन में बराबरी का हक़ दिया जाता है। लेकिन अरमान अली के मामा ने चालाकी से सारी जमीन अपनी पत्नी के नाम दर्ज कर दिया जिस कारण अरमान अली को पूरे परिवार के साथ आजीविका की तलाश में असम से बाहर निकलना पड़ा।

आज से 18 साल पहले वह अपनी पत्नी और बच्चों के साथ लखनऊ आए। और आठ साल पहले फैजाबाद के हसनु कटरा नाम के इस बस्ती में बसे। इन 18 सालों का महत्वपूर्ण समय केवल कचरा बीनने में ही बीत गया और कब बच्चे बड़े हो गये पता नहीं चला। आज भी शिक्षा, स्वास्थ जैसे मूलभूत सुविधाओं के कोसों दूर कचरे के ढेर में जीवन बिता रहे हैं। अरमान अली बताते हैं कि उनकी जमीन का केस गुवाहाटी के कोट में चल रहा है, जिसके लिए उनको समय-समय पर वकील की फीस भी देनी पड़ती है। वो आगे बताते हें कि वकील ने वादा किया है केस उनके ही पक्ष में होगा। लेकिन लॉकडाउन के बाद वह केस आगे नहीं बड़ पाया।

बंद के समय जब उनके पास काम नहीं था और ना ही घर पर राशन था, इस संकट के समय जब सरकार को उनके जैसे लोगों की मदद करनी थी तो कोई भी नहीं आया, इस आपातकाल के समय संगठन और आस-पास के लोग आगे आए। उनके परिवार और उन्हें मदद की। आज वह जिसकी जमीन पर रह रहे, और उनके जैसे कई लोग को, मकान को किराया भी देना था। ऐसे समय में उनके ठेकेदार ने भी घर का किराया देने में मदद किया।

निष्कर्ष

शहरों को साफ सुधरा रखने एवं उत्पन्न कचरे का निपटान करने में कचरा बीनने वाले मजदूर अहम भूमिका निभाते है। लॉकडाउन के

दौरान भी घरों से कूड़ा लेने व शहरो को साफ रखने में यह मजदूर सबसे आगे थें बावजूद इसके लोगो का नजरिया और व्यवहार इन मजदूरों के प्रति नकारात्मक ही रहा।

हांलाकि लाकॅडाउन से पहले भी इन मजदूरों को भेदभाव का शिकार होना पड़ता था इतना ही नही इन्हें स्थानीय लोगों द्वारा नस्लीय तानों का भी सामना करना पड़ता था। पुलिस द्वारा इनसे इनका पहचान पत्र मांगा जाता है जोकि अधिकतर मजदूरों के पास नही होते है क्योकि यह मजदूर प्रवासी मजदूर है इसलिए इनके पास हमेशा ही दस्तावेजों का अभाव रहता है जिसके चलते इन्हें पुलिस उत्पीड़न भी रहना पड़ता है।

केन्द्र सरकार और राज्य सरकार को इनके काम को मान्यता देते हुए इन्हें औपचारिक ढंाचे का हिस्सा बनाते हुए बुनियादी सुविधाएं देनी चाहिए जिसके तहत राशन, स्वास्थ्य, बच्चों के लिए मुफ्त शिक्षा की व्यवस्था होनी चाहिए। स्थानीय संस्थानों को इन मजदूरों के प्रति समाज के व्यवहार को बदलने एवं नस्लीय भेदभाव को खत्म करने के लिए काम करना चाहिए।

अध्याय-2

घरेलू कामगार

लाकॅडाउन लगने से पहले घरेलू कामगार मजदूर घरों में काम करके अपने दैनिक खर्चे, और अपने परिवार का भरण-पोषण करने में समर्थ थे। जब कोरोना वायरस धीरे-धीरे पूरे देश में फैलने लगा तो केन्द्र सरकार द्वारा लॉकडाउन लगा दिया गया एवं लोगो की आवाजाही पूर्ण रूप से बंद हो गयी। लोगों ने भी अपने घरों में काम करने वाले लोगों को वायरस के डर से आने के लिए मना कर दिया, जिसके चलते घरेलू मजदूरों को अपनी नौकरी से हाथ धोना पड़ा एवं इन मजदूरों के लिए जीवन यापन करना भी मुश्किल हो गया। अप्रैल-मई 2020 से इन मजदूरों के पास रोजगार नही है।

बिना सूचना के लगे पहले लाकॅडाउन के दौरान लोगों के पास इतना भी पैसा नही था कि वह अपनी रोजाना की जरूरतों का सामान एवं राशन खरीद कर अपने घरों में रख पाते। शुरूआती दो लाकॅडाउन के दौरान घरेलू कामगार मजदूर ट्रेड यूनियनों और स्वंयसेवी संस्थाओं द्वारा चलाये जा रहे राहत कार्यो पर निर्भर थे। दूसरे राज्यों से फैजाबाद आये यह घरेलू कामगार सरकारों द्वारा चलाई जा रही सरकारी राशन की सुविधा का भी लाभ नही ले पा रहे है।

लॉकडाउन के उस कठिन दौर में केन्द्र सरकार ने मकान मालिकों से आग्रह किया था कि वह अपने किरायेदारों से इस अवधि के दौरान किराया ना ले, लेकिन कुछ ही जगहों पर ऐसा हो पाया। ऐसी सूरत में जो घरेलू कामगार किराये के घर में रहते थे वह मानसिक दबाव में थे कि

बिना काम के वह किराया कैसे दे पायेगें। हांलाकि मजदूरों को यह डर था कि यदि वह काम की तलाश में घर से बाहर जायेगे तो वह संक्रमित हो सकते है, परन्तु इसके सिवाय उनके पास कोई दूसरा रास्ता नही था क्योकि बिना काम किये इन मजदूरों की दैनिक जरूरते पूरी नही हो सकती थी। इन मजदूरों की मजदूरी इतनी कम होती है कि यह भविष्य के लिए कुछ भी जमा पूंजी रखने में असमर्थ है।

इस आपदा के समय में ज्यादातर घरेलू कामगार अपनी मार्च महीने की तन्खवाह भी नहीं ले पाये, क्योकि अचानक से आवाजाही पर रोक लगा दी गयी थी। बहुत कम संख्या में ऐसे मजूदर थे जो काफी दिक्कतों का सामना करते हुए अपनी मजदूरी ले पाये। इसमें भी इन मजदूरों को पुलिस की प्रताड़ना को भी झेलना पड़ा।

घरेलू कामगार यूनियन में काम करने वाली कार्यक्रता नीलम कुमारी के अनुसार फैजाबाद शहर में काम करने वाले दो हजार मजदूर अपना मार्च के महीने का वेतन नही पा सके, क्योकि लोगो ने पैसा देने से इंकार कर दिया और कारण यह दिया कि मार्च महीने के अंतिम दस दिनों में मजदूरो ने अपना काम नियमिता से नही किया।

कांति एक घरेलू कामगार का काम करती हैं। उनके पति दिहाड़ी पर मजदूरी करते हैं। कांति बताती हैं लॉकडाउन के बाद से उनके पति के पास कहीं भी कोई काम नहीं है। कांति जी की एक बेटी है जो अपनी मौसी के पास रहती है। कांति आगे बताती हैं कि वह एक दिन अपनी बेटी के साथ बहन के घर जा रही थी। तभी रास्ते में उनकी बेटी सड़क पर फिसल कर गिर गयी जिसके कारण उसके एक हाथ की हड्डी टूट गयी। तुरंत ही उसे एक निजी अस्पताल में ले जाया गया, जहाँ करीब तीन हजार रुपए खर्च हो

गये। पैसों की कमी के चलते वो आगे इलाज नहीं करा पाये। जिसके बाद नीलम जो अवध पीपल फोरम से जुड़ी है वो उनकी बेटी को जिला अस्पताल ले गयी और जरूरी दवा-पट्टी करवाई।

कांति जो कुछ भी कमाई करती थी उससे कुछ पैसा बचाकर एक चिट फंड समूह में पिछले एक साल से जमा करती थी। लॉकडाउन के द्वारान वो जब अपना पैसा निकालने के लिए गयी तो चिट फंड समूह के व्यक्ति ने लॉकडाउन का बहाना बनाकर पैसे देने से मना कर दिया। लॉकडाउन के समय जीवनयापन के लिए उनकी ये जमा पूंजी ही एकमात्र सहारा थी। कांति कहती हैं कि किसी भी तरह उनकी जमा पूंजी उनको मिल जाए। या आप लोग ही किसी बड़े साहब से बोलकर उनका पैसा दिलवा दीजिये बड़ी मदद होगी।

सुशीला देवी घरेलू कामगार का काम करती हैं। इस काम से वह मात्र पाँच सौ रूपए ही कमा पाती हैं। वह पैर से विकलांग है जिसके कारण वो अधिक काम नहीं कर पाती। सुशीला के पति ड्राइवर का काम करते हैं, उनका पूरा परिवार एक किराए के घर में रहता है। लॉकडाउन होने के कारण पति का काम भी बंद हो गया था। इस कारण वो पिछले पाँच महीने तक घर का किराया भी नहीं दे पाये। सुशीला जी बताती हैं कि आज घर चलाना बहुत मुश्किल हो गया है।

मुश्किल के समय संगठन ने इनको राशन पहुँचाकर मदद की थी। सुशीला कहती हैं कि अगर उनके पास कुछ जमीन होती तो उन्हें आज इस स्थिति का सामना नहीं करना पड़ता।

रंजना सिविल लाइंस में घरेलू कामगार का काम करती हैं। लेकिन लॉकडाउन के कारण जिन घरों में काम करती थी वह सब बंद हो गया।

लोगों के घरों में काम पर जाती थी उन सभी ने बंद के दौरान पैसा भी नहीं दिया।जिसके कारण वह अपनी दोनों बेटियों कि पढाई का खर्च नहीं जुटा पा रही हैं।

अभी फिलहाल इनके पढाई का खर्च इनके बड़े भाई ही उठाते हैं। रंजना जी बताती है कि लॉकडाउन के समय एक दिन वो काम करने जा रही थी लेकिन दरोगा बाबू ने उन्हें रोक दिया, ये कहते हुए कि कोई भी बाहर नहीं जा सकता। उन्होंने कहा कि नहीं गयी तो वो अपने बच्चों को क्या खिलाएँगी, तो दारोगा बाबू बोले कि जब लॉकडाउन खुलेगा तब ही कहीं बाहर जाना। वह आगे बताती हैं कि हमने सुना था कि प्रधानमंत्री ने लोगों से घरेलू कामगारों के भुगतान में कटौती नहीं करने की अपील की है। लेकिन वास्तव में हममें से किसी को भी लॉकडाउन के दौरान वेतन नहीं दिया गया।

रंजना आगे बताती है की उन्होनें किसी महिला समूह के साथ मिलकर एक साहूकार के पास चार सौ रुपए महीना के हिसाब से एक साल तक पैसा जमा कराया था, जिसका एक बॉन्ड भी बना था। लेकिन अब साहूकार पैसे देने से मना कर रहा। वो अब असमंजस में हैं कि उनका पैसा उन्हें कैसे वापस मिल पाएगा। रंजना बताती हैं की बहुत कम लोग ही उनकी मदद के लिए आगे आए, लेकिन अवध पीपल्स फोरम ने राशन और स्वास्थ्य किट दोनों दिया।

अंजली घरेलू कामगार का काम करती हैं। जिससे वह एक महीने में पंद्रह सौ से दो हजार रुपये तक की कमाई कर लेती थीं। इनका एक संयुक्त परिवार है, इनके पति और देवर दिहाड़ी मज़दूरी का काम करते हैं। अंजली बताती हैं कि लॉकडाउन के बाद से उन्हें कहीं भी काम नही मिला। जिन लोगों के घरों में जाकर वो काम करती थी उन सब ने भी

काम देने से मना कर दिया।

एक बार बंद कि घोषणा होने के बाद उन्हें कई समस्याओं का सामना करना पड़ा, और लगभग दो महीने तक बिना किसी नौकरी के घर बैठना पड़ा। लॉकडाउन के दौरान काम नहीं होने के कारण आर्थिक स्थिति खराब हो गयी। जिसके कारण इनकी देवरानी अपने पति और परिवार को छोड़कर अपने मायके में माँ-बाप के पास चली गयी। अंजली आगे कहती हैं कि इनकी देवरानी गलत नहीं है जब घर में खाने पीने को नहीं मिलेगा तो कैसे कोई रह सकता है। इस कठिन समय में संगठन ने उनकी काफी मदद की।

दुर्गावती अठारह वर्षों से घरेलू कामगार का काम कर रही हैं, जिससे इनकी प्रतिमाह दो हजार तक की आमदनी हो जाती थी। लेकिन लॉकडाउन के दौरान काम बंद हो गया। जिन लोगों के घरों में वो काम किया करती थी उन्होने कोरोना के डर से उनको अपने घर में काम के लिए आने नहीं दिया। इनके पति दिहाड़ी पर मजदूरी का काम करते हैं, उन्हें भी कोई काम नहीं मिला। वो बताती हैं कि इस बंद के समय पीडीएस सरकारी राशन की दुकान और एनजीओ के माध्यम से मिले राशन पर ही निर्भर रहना पड़ा। लेकिन सरकार द्वारा जो राशन किट मिले उसमें सिर्फ चावल, दाल और गेहूं था, लेकिन तेल, मसाले और नमक नहीं। वह बताती हैं की यह एक ऐसा समय था जब इन्हें मसालों और नमक की व्यवस्था करने के लिए भी बहुत मुश्किलों का सामना करना पड़ा।

सुनीता एक घरेलू कामगार महिला के तौर पर काम करती हैं। इनके पति दिहाड़ी मजदूर के तौर पर काम करते हैं। सुनीता जी के दो बेटे हैं। इनके बेटे की शादी होने वाली थी लेकिन ठीक उसी समय देश में लॉकडाउन लग गया और लड़के की शादी भी रुक गयी। परिवार में सभी का काम बंद हो गया, जिसके कारण घर पर पैसों को काफी दिक्कत हो गयी। सुनीता जी बताती हैं कि एक तरफ तो सरकार कह रही है कि जो लोगों के घरों में काम करने वाले लोग हैं उनको काम से नहीं निकाला जाए, ना ही किसी किराएदार से किराया वसूला जाए। लेकिन ऐसा कहीं भी नही हुआ। एक ओर कोरोना के कारण काम बंद हो गया, दूसरी ओर महंगाई इस तरह बढ़ गयी कि घर चलाना ही मुश्किल हो गया। सरकार की ओर से दो बार राशन दिया गया। पहली बार तो मुफ्त में दिया लेकिन दूसरी बार उन्हें उसके लिए पैसा देना पड़ा। इस संकट के समय में इनकी मदद अवध पीपल्स फोरम के लोगों ने राशन देकर भूख से बचाया है।

निष्कर्ष

फैजाबाद शहर में घरेलू कामगार मजदूर एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है।

कोविड-19 ने घरेलू कामगार मजदूरों की असुरक्षा को समझने के लिए नयी धारणा को स्थापित किया है। घरेलू कामगार मजदूरों के अधिकारों की सुरक्षा और संरक्षण के लिए कोई श्रम कानून नही है। इन महामारी ने घरेलू कामगारों के साथ होने वाले राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक भेदभाव को और ज्यादा बढ़ाया है, हालाकि यह भेदभाव पहले से ही होता आ रहा परन्तु इस महामारी की स्थिति ने मजदूरों की स्थिति को ज्यादा दयनीय बनाया है।

मजदूर वर्ग पहले से ही नौकरी की अनिश्चितता एवं न्यूनतम वेतन भी न मिल पाना आदि परेशानियों से जुझ रहा था। लॉकडाउन के दौरान मजदूर वर्ग के लिए उत्पन्न हुई परेशानियों ने यह सिद्व किया है कि बने हुए श्रम कानूनों पर पुनः सोच विचार की जरूरत है, क्योकि इस स्थिति में ना सिर्फ मजदूरों के अधिकारों का हनन हुआ है बल्कि मानवधिकारों का भी उल्लंघन हुआ है। राज्य सरकार को चाहिए कि वह घरेलू कामगार मजदूरों के लिए रोजगार, खाना, सम्मानजनक वेतन और जो मजदूर किराये के घर में रहते है उनके घर की किराये की व्यवस्था सुनिश्चित करे। ट्रेड यूनियन और स्ंवय-सेवी संगठन जैसे अवध पीयूप्लस फार्म जैसे संगठनों को चाहिए कि वह 2017 में सुप्रीम कोंट के आदेश जिसमें असंगठित क्षेत्र के मजदूरों के लिए सामाजिक सुरक्षा के तहत जल्द से जल्द घरेलू कामगार मजदूरों का पंजीकरण करने के लिए प्रयास करना चाहिए।

अध्याय-3

पावरलूम मजदूर

टांडा की कुल जनंसख्या करीब 5 लाख है जिसमें से करीब 90 प्रतिशत मजदूरों का परिवार मशीनों पर कपड़ा बुनकर अपनी जीविका चलाते है। टांडा भारत में आजादी से पहले कपड़े के उद्योग के लिए प्रसिद्व है। टांडा शहर में प्रत्येक परिवार किसी न किसी तरह से कपड़ा बुनने के काम में सहयोग दे रहा है, जिसके तहत लोग सूत बनाने, लूम का ढांचा तैयार करने, और कुछ लोग मशीन पर कपड़ा बुनने का काम कर रहें है। कुछ बढई है जोकि हाथ से कपड़ा बुनने के लिए प्रयोग में होने वाले लूम को बनाने का काम कर रहें है। टांडा में रहने वाला मजदूर वर्ग लगातार यह प्रयास कर रहा है कि किस तरह से कपड़ा उद्योग को बेहतर बनाया जा सकता है। कपड़ा उद्योग भारत का एक महत्वपूर्ण उद्योग है, मशीनों से कपड़ा बुनने का काम पूरे देश में कपड़ा उद्योग को कच्चा माल उत्पन्न करवाता है। भारत के कपड़ा उद्योग का ढांचा बेहद पेचीदा है चाहे वह आधुनिक मशीनो से बनने वाला कपड़ा हो या फिर हथकरघे द्वारा बनने वाला कपड़ा। इन दोनो के बीच यह छोटे स्तर पर काम करने वाले पावरलूम मजदूर आते है।

अन्तराष्ट्रीय जनरल आंफ एडवास रिसर्च इन कांमस मैनेजमेंट एंड सोशल साइंस के अध्ययन के अनुसार भारत के कुल कपड़ा उत्पादन में 5 प्रतिशत वह मजदूर है तो संगठित क्षेत्र के तहत काम करते है, 20 प्रतिशत हैडलूम द्वारा, 15 प्रतिशत बुनाई के काम में एवं 60 प्रतिशत लोग पावर लूम के तहत काम करते है। यह कहना गलत नही होगा कि

पावरलूम सेक्टर भारत के कपड़ा उद्योग की रीढ़ है।

अन्य देशों के मुकाबलें भारत का कपड़ा उद्योग का ढांचा अलग है इसमें निम्न स्तर पर, गैर एकीकृत बुनाई, कताई एवं परिधान बनाने की कंपनी है। बुनकर कपड़ा उद्योग का मुख्य स्तंभ है, टांडा में काम करने वाले बनुकरों की आर्थिक-सामाजिक स्थिति बेहद दयनीय है। इन मजदूरों के लिए जीविका का सवाल हमेशा ही बना रहता है। अपनी रोजमर्रा की जरूरते पूरी करने में भी असमर्थ होते हए यह मजदूर बेहद खराब स्थिति में अपना जीवन यापन करने के लिए विवश हैं। बुनकरों के एक परिवार में करीब 8 से 10 सदस्य होते हैं इतने बड़े परिवार का इतने कम आय में गुजारा कर पाना असंभव है।

ज्यादातर मजदूरों का काम-धन्धा लाकॅडाउन लगने के दो तीन महीनों के अन्दर ही बंद हो गया था। बहुत कम करघे ऐसे है जिन्हें सरकारी अनुमति के बाद चलाया जाने लगा। लॉकडाउन के दौरान क्योंकि काम पूरी तरह से बंद हो गया था, जिसके चलते मार्केट में कच्चे माल की मांग भी कम हो गयी थी, इस वजह से अन्य मजदूर जो दूसरे शहरों से आये थे वह भी अपने घरों को वापस चले गये।

इसी बीच सरकार ने घोषणा की कि प्रत्येक लूम पर जो छूट पहले पैंसठ रुपये थी उसे खत्म करके नई रेट दरों पर – जोकि पंद्रह सौ प्रति माह प्रत्येक करघे पर होगा – पर विचार किया जायेगा। आलम बुनकर के अनुसार यह बदलाव पूरे मशीनी करघा उद्योग को बर्बाद कर देगा क्योंकि इससे मजदूरों को अतिरिक्त लाभ नही मिल पायेगा।

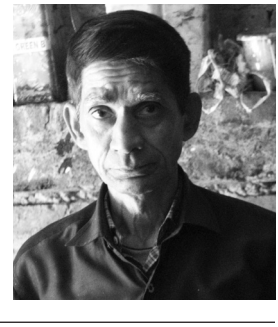

ज़ाहिद हुसैन पेशे से कला सिखाते हैं, और सोलह वर्षों से फातिमा गर्ल्स इंटर कॉलेज, टांडा में बतौर कला के शिक्षक के तौर पर कार्य करते आए हैं। बॉम्बे आर्ट कॉलेज से पेंटिंग में डिप्लोमा धारक हैं। जाहीर हुसैन जी कहते हैं कि उन्हें जो पेंटिंग का हुनर मिला

उसका कौशल उन्हें पारिवारिक परंपरा रूप में मिला है। उनका परिवार कई सालों से कपडों मैं डिजाइनिग, पेंटिंग का काम करता रहा है। मार्च महीने तक वह फातिमा गर्ल्स इंटर कॉलेज टांडा के स्कूल में बचों को पढ़ा रहे थे। जिससे महीने की तनख्वाह पाँच हजार तक उनको मिलता था। लेकिन इस बीच देशव्यापी लॉक डाउन ने उनकी ये नौकरी छीन ली। आज वह अपनी आजीविका के लिए एक छोटे से यूनिट में दो लड़कों के साथ स्थानीय पावरलूम में बनने वाले कपड़ों पर डिजाइनिंग का काम कर रहे हैं।

ज़ाहिद जी अपनी पत्नी और दो बच्चों के साथ रहते हैं। वो बताते हैं कि लॉकडाउन से पहले उनके दोनों बच्चों की स्कूली शिक्षा जारी थी। देशव्यापी बंद के कारण नौकरी छूट जाने से आज बड़े लड़के की पढ़ाई छूट गयी। जाहिद जी का कहना है कि लॉकडाउन के शुरुआती दौर में अपनी जमा पूंजी से घर खर्च चलाया। जब नकदी ख़त्म गयी तो वह दोस्तों और रिश्तेदारों से पैसे उधार लेने के लिए मजबूर हो गये। लेकिन उसके बाद भी जब घर खर्च चलना और अधिक मुश्किल हो गया और कॉलेज खुलने कि उम्मीद भी खत्म हो गयी तो उन्होने कपड़े डिजाइन करने का फैसला किया। आज वह अपने द्वारा डिज़ाइन किए गये एक स्टॉल का पर दो रुपए तक कमाते हैं। जिससे वह महीने में वह मेहनत और पूरी लागत देने के बाद लगभग छह हजार रुपये तक कमाई कर लेते हैं।

ज़ाहिद जी का कहना है की सरकार को उनके जैसे कुशल और योग्य शिक्षकों के लिए अवसर पैदा करने चाहिए और उनकी प्रतिभा को बर्बाद नहीं होने देना चाहिए। उन्होंने यह भी कहा कि शिक्षक एक राष्ट्र की नींव हैं और राज्य को उन शिक्षकों के प्रति अपनी प्रतिबद्धता दिखानी चाहिए जो लॉकडाउन के कारण नौकरी खो चुके हैं।

अकबर अली जी का खुद का एक छोटा सा पावरलूम है जिसमें 10 मशीनें लगी हैं। अकबर अली जी का पांच लोगों का परिवार उनके करघे

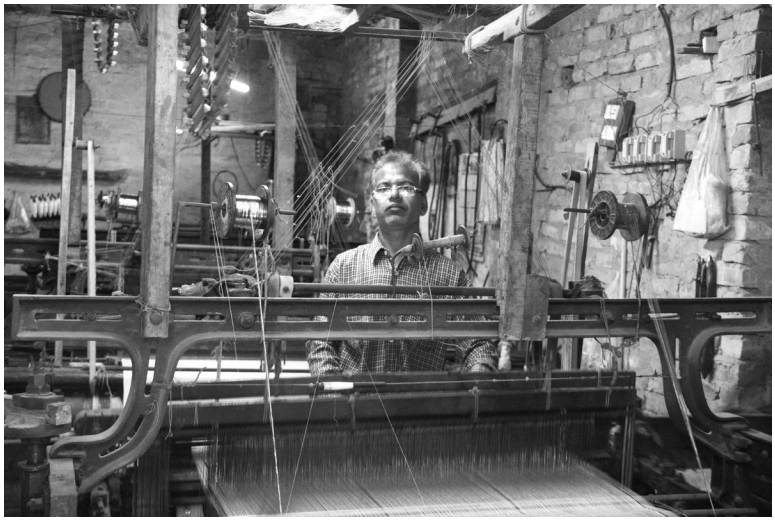

में हर दिन बारह घंटे पसीना बहाने से होने वाली आय पर निर्भर करता है। पावर लूम में काम करना उनका पुश्तैनी पेशा है, जिसके लिए पूरा परिवार सुबह से ही काम पर जुट जाता है। कोरोना महामारी से पहले उनका परिवार किसी तरह अपनी रोज की आजीविका चला रहा था, जिससे हफ्ते में वह तकरीबन पाँच से छः हजार तक की कमाई कर लेते थे। लेकिन लॉक डाउन के बाद उनकी स्थिति बिगड़ गयी।

अकबर अली बताते हैं कि कोरोना वाइरस से ज़्यादा तो सरकार के द्वारा बिना किसी योजना के लॉकडाउन लगाने ने उनके पुरे क्षेत्र को प्रभावित किया है। इस बंद के समय कपड़े के ऑर्डर देने वाले ठेकेदारों ने उनको ऑर्डर देना बंद कर दिया। पहले का बकाया राशि भी देने के लिया मना कर दिये। इस कारण उनको ना ही बाजार से कोई काम मिल रहा था, ना ही कच्चा माल उपलब्ध हो पाया। जिस कारण उन्हें अपने परिवार की बुनियादी जरूरतों से पूरा करने के लिए एक साहूकार से बीस हजार रुपये उधार लेने पड़े।

उन्होंने यह भी बताया कि राज्य सरकार ने करघों पर मिलने वाली बिजली की सब्सिडी को खत्म करने का निर्णय लिया। जहां पहले उनके

जैसे सभी लोगों को प्रति लूम प्रति महिना 65 रुपये देना होता था, आज वह राशि बढाकर 1500 रुपये प्रति लूम प्रति महीने कर दिया गया। अकबर अली जी का कहना है कि इस निर्णय का मकसद मजदूर वर्ग के उत्पीड़न के अलावा कुछ नहीं है। वह अभी तक के पुराने टैरिफ के हिसाब से ही बिजली के बिल जमा करते आ रहे हैं। लेकिन उन्हें ऑनलाइन बिल से पता चलता है कि उनका बकाया राशि आज 1 लाख 61 हजार रुपये तक पहुंच गया है।

अकबर अली जी का कहना है की नई बढ़ी हुई दर को सरकार को वापस लेना चाहिए। अगर सरकार चाहती तो क्यों नहीं एक स्लैब बनाकर प्रति लूम के अनुसार बिजली की दर तय कर दें। इससे बड़े और छोटे बुनकरों के बीच प्रतिस्पर्धा के लिए एक सामन्तर बाजार तैयार करने मैं मदद मिलेगी। अंत में अकबर जी ने कहा कि बुनकरों को मुआवजा दिया जाना चाहिए नहीं तो पूरा उद्योग जल्दी ही खत्म होने की कगार पर आ जाएगा।

ज़बीउल्लाह एक बुनकर है, इनके परिवार में पत्नी और दो बच्चे हैं। अपने पड़ोस के पावरलूम में पिछले चार सालों से मजदूरी का काम

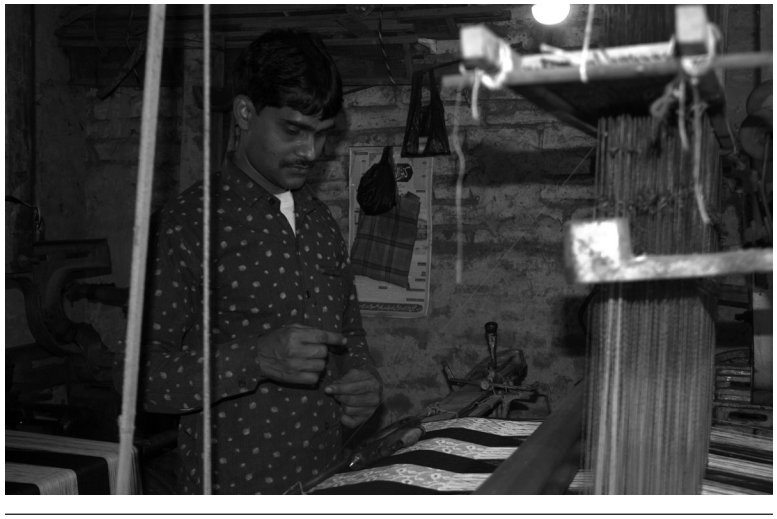

कर रहे हैं। वह सप्ताह में लगभग दो हजार से बाईस सौ रुपये तक की कमाई कर लेते हैं। जिसके लिए उन्हें हर दिन सुबह 10 बजे से रात 10 बजे तक, 12 घंटे काम करता पड़ता है। यदि वह छुट्टी लेते तो उसे उस दिन का मेहनताना भी नहीं मिलता है।

लॉकडाउन के दौरान काम बंद होने के कारण लूम मालिक ने थोड़े से पैसे देकर आगे काम पर आने के लिए मना कर दिया। जिस कारण परिवार के लिए रोज़मर्रा की जरूरत को पूरा कर पाना बहुत मुश्किल हो रहा था। क्यूंकी इस दौरान खाने पीने की कीमतें काफी बढ़ रही थीं। उनके पास कमाने का कोई अन्य जरिया नहीं था। इसी बीच लॉकडाउन के दौरान उनका बच्चा बीमार हो गया था तो इलाज के लिए एक परिचित से पांच हजार रुपये उधार लेना पड़ा।

ज़बीउल्लाह बताते हैं की अस्पताल में भी डॉक्टर के द्वारा उन्हें भेदभाव का सामना करना पड़ा। क्योंकि डॉक्टर मरीजों को छूने के लिए तैयार नहीं थे। ज़बीउल्लाह यह भी बताते की सरकार द्वारा लॉकडाउन के दौरान घोषित राहत राशि के लिस्ट में उनका नाम होने के बावजूद भी आज तक उनको कोई मदद नहीं मिली। जिसके लिए वह कई बार बैंक जाकर पूछताछ करते रहे, लेकिन हर बार ही उनको खाली हाथ ही लौटना पड़ा। वो आगे कहते हैं कि शायद ही सरकार द्वारा घोषित राहत राशि बुनकरों तक पहुँच पाएगी।

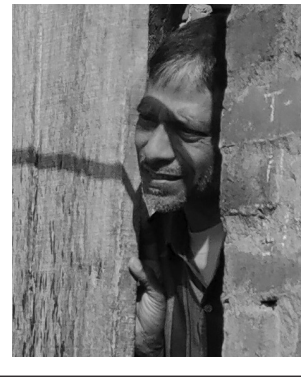

तौकीर अहमद एक पावरलूम में दिहाड़ी मजदूरी पर काम करते हैं। हर दिन बारह घंटे तक काम करते हैं तब कहीं मुश्किल से वह सप्ताह में औसतन आठ सौ रुपये तक की कमाई कर पाते हैं। तौकीर जी काफी समय से मधुमेह की बीमारी से पीड़ित हैं, और भी बहुत सारी स्वास्थ्य समस्याओं के साथ अपना जीवन व्यतीत कर रहे। तौकिर

बताते हैं की एक बार जब वह करघे में काम कर रहे थे तो अचानक ही उनके दाहिने पैर के अंगूठे मैं चोट लग गयी। जिसके बाद वह चोट कभी ठीक नहीं हुई और संक्रमण बड़ता ही रहा, और अंत मैं उन्हें अपना पैर का अंगूठा कटवाना पड़ा।

तौकीर के परिवार में उनकी पत्नी और चार बेटे हैं। लॉकडाउन के कारण उनके बेटे को स्कूल छोड़ना पडा। आज वह एक पास के ही बैठका (ऑफिस जहां पर कागज संबंधिक कार्य होता उसे बैठका कहा जाता है) में काम करता है। जिससे वह पिता के साथ परिवार की जरूरतों को पूरा करने में कुछ मदद कर पा रहा। सरकार द्वारा घोषित राहत राशि प्राप्त करने वालों की सूची में तौकीर की पत्नी का का नाम भी था, लेकिन उनके बैंक खाते में यह राशि नहीं आई। लॉकडाउन के बाद जब काम फिर से शुरू हुआ तो तौकिर अस्वस्थ होने के कारण अपना काम नहीं कर पा रहे क्योंकि भारी दवाओं ने उनके शरीर को बहुत कमजोर बना दिया है।

लॉकडाउन के दौरान उनके पास कोई काम नहीं था। तौकीर जैसे बुनकरों के सामने आजीविका का बहुत बड़ा संकट था। लॉक डाउन के समय पारिवारिक जरूरतों की पूर्ति करने के बाद उनके पास की सभी जमा पूंजी खत्म हो गयी। इस समय में स्थानीय लोगों और कुछ गैर सरकारी संगठनों द्वारा उन्हें चावल और गेहूं की मदद मिली। तौकिर आगे बताते हैं की सरकारी गल्ले से दो बार राशन मिला। पहली बार वह सभी को मुफ्त दिया गया लेकिन दूरी बार उसका भुगतान करना पड़ा।

ज़हीर अनवर एक किराए के घर में अपना छोटा सा पावरलूम चलाते हैं। वह अपनी पत्नी और तीन बच्चों के साथ रहते हैं। लॉकडाउन के समय बहुत सारी परेशानी के बीच किसी भी तरह अपना जीवन बिताया। जाहीर बताते हैं कि राष्ट्रव्यापी बंद की घोषणा की गयी थी तब उनके पास में सिर्फ तीन हजार रुपये ही थे। उन्होंने कहा कि यह एक डरावना समय था और परिवार को कुछ समझ नहीं आ रहा था कि आगे क्या

होगा। लॉकडाउन के पहले दो चरण अनिश्चितताओं से भरा गुजारा। जो व्यक्ति कच्चा माल मुहैया कराता था उसने अचानक ही माल की सप्लाई भी बंद कर दी। बड़े बुनकर ने भी इस बीच माल देना करना बंद कर दिया।

ज़हीर बताते हैं कि सरकारी नौकरी और पैसे वाले दोस्तों से पैसे उधार लेने पड़े। हर महीने के दो से तीन हजार रुपए उधार लिए। छह महीने के भीतर ही वह कर्ज तीस हजार रुपये हो गया। आज छोटे-छोटे ऑर्डर मिलने शुरू हुए हैं जिससे प्रति सप्ताह तीन से चार हजार रुपये तक कमाई होने लगी है। लेकिन यह पैसा परिवार के लिए सभी बुनियादी जरूरतों को पूरा करने के लिए पर्याप्त नहीं है।

जहीर आगे कहते हैं कि आज भी कर्ज नहीं चुका पा रहे हैं। लॉकडाउन के दौरान काम नहीं होने के बावजूद भी पावरलूम के घर का किराया देना पड़ा। उनका कहना है कि सरकार की अपील के बाद भी लॉकडाउन के दौरान किसी भी मकान मालिक ने किराए में कमी या छूट नहीं दी। कई बार अपने मालिक से मोल भाव करने के बाद उनका

किराया दो हजार से घटाकर सत्रह सौ रुपये किया।

ज़हीर जी ने बताया कि हमेशा से ही बड़े बुनकरों को कच्चे माल पर सरकारी छूट मिलती है। हम जैसे छोटे बुनकरों को केवल बिजली के बिलों में छूट मिली थी, जिन्हें फिर से वापस लिया जा रहा है। मौजूदा बुनकर यूनियन आज इतना प्रभावी नहीं रहा कि वह इन सभी मुद्दों पर संबंधित अधिकारियों के साथ बातचीत और मोलभाव करने के लिए सक्षम हो। सरकारी तंत्र हमेशा से ही यूनियन कि मांगों को नजरअंदाज करती आई है। इसी भ्रम में कई बुनकरों ने जुलाई 2020 तक नए बिजली दर का भुगतान किया। लेकिन अब लोगों ने बिलों का यह भुगतान करना बंद कर दिया है। क्योंकि नई बिजली दरों के लागू होने से बुनकरों के लिए मूल लागत भी निकाल पाना संभव नहीं है।

कमर अली के पास पाँच पावर लूम मशीनें हैं। जिसमें वह खुद हर दिन बारह घंटे काम करते हैं। वह अपनी पत्नी और दो बच्चों के साथ रहते हैं। कमर अली कहते हैं की लॉकडाउन के दौरान बिना किसी काम के अपने घरों के अंदर बैठना बहुत ही दुखदायी था। बंद के समय पारिवारिक खर्चों के लिए पैसों की कमी हो गयी। बाजार से कपड़े के

आर्डर मिलना बंद हो गया। कमर आगे बताते हैं कि इस संकट के समय के दौरान उनके परिवार को कोई सरकारी सहायता नहीं मिली। उन्हें सिर्फ एक बार मुफ्त में राशन मिला जो चार लोगों के परिवार को खिलाने के लिए भी पर्याप्त नहीं था।

कमर अली बताते हैं कपड़े की मांग में आज भी काफी गिरावट है जिसके कारण व्यापार में मंदी आ गयी। माँगें कम होने के कारण गावों के सभी हथकरघे कई हफ्तों तक बंद पड़े रहे। ज्यादातर बुनकर कच्चे माल की कमी के कारण नई साड़ियों की बुनाई नहीं कर पा रहे हैं। अधिकांश बुनकर कच्चे माल के लिए बड़े बुनकरों पर ही निर्भर रहते हैं बड़े-बुनकर कच्चे माल में निवेश करते हैं, फिर छोटे बुनकरों को अपने दिये गये डिजाइन के अनुसार ही कपड़े बनाने के लिए कहते हैं। और बाद में उनसे खरीदकर बाजार में अपने भाव पर बेचते हैं। नोटबंदी के बाद से बाजार की मांगों में पचास फीसदी की कमी आई है।

कमर यह भी कहते कि राज्य सरकार द्वारा बिजली के बिलों पर सब्सिडी को खत्म करने से आज लोगों को अपने करघों को बेचने के लिए मजबूर कर दिया है। उनका कहना है कि समुदाय की नई पीढ़ी धीरे-धीरे बुनाई को पेशे से दूर भाग रही है।

निष्कर्ष

यह बेहद निराशाजनक स्थिति है कि जिन मजदूरों के सहारे पूरा कपड़ा उद्योग खड़ा वह मजदूर ही अपनी रोजमर्रा की जरूरतें पूरी करने में सक्षम नही हो पा रहे है। इन मजदूरों के पास ना अच्छी स्वास्थय सुविधायें है ना ही अच्छी शिक्षा और ना ही नियमित रूप से राशन की व्यवस्था।

उत्तर प्रदेश सरकार ने 2020 में ही मशीनी करघा पर मिलने वाली छूट को भी समाप्त कर दिया है। मशीनी करघा में आने वाले समय में रोजगार के अच्छे अवसर हो सकते थे परन्तु सरकार के इस निर्णय ने इस उद्योग की कमर तोड़ दी साथ-साथ करोनो महामारी के चलते

अचानक लगे लॉकडाउन ने भी कपडा उद्योग पर नकारात्मक प्रभाव डाला है। करघा बुनकर पूरे कपड़ा उद्योग की रीढ़ है बावजदू इसके यह आर्थिक रूप ये पिछड़ा हुआ तबका है। इन मजदूरों को केन्द्र सरकार, राज्य सरकार और उच्च अधिकारियों की अनदेखी के चलते काफी कुछ झेलना पड़ रहा है।

पहले नोटबंदी, फिर जी.एस.टी एवं अब बिना योजना के लगाये गये लॉकडाउन ने पूरे मशीनी करघा उद्योग को बर्बाद कर दिया है। इस उद्योग को फिर से जीवित करने के लिए एक बेहतर बाजार, आर्थिक सहायता, तकनीकी सहायता की आवश्यकता है। सरकार को चाहिए कि वह मशीनी करघा में काम करने वाले मजदूरो के रोजगार को सुनिश्चित करते हुए मशीनी करघा उद्योग पुनः विकसित हो सके उस दिशा में सकारात्मक योजनायें बनाये।

अध्याय - 4

प्रवासी मजदूर

अचानक से कोरोना महामारी के फैलने और सरकारों द्वारा अव्यस्थित रवैये ने हमारे देश की व्यवस्था प्रणाली की पोल खोल कर रख दी। इस महामारी का असर आगे आने वाले कई दशकों तक रहेगा। यह महामारी वैश्विक इतिहास में दर्ज है कि इस समय लोग कितने डरे हुए एवं अनिश्चिताओं से घिरे हुए थे।यह एक प्रकार से कठिन युद्व के समान था जिसमें लोगो की स्थिति काफी दयनीय हो गयी। कोरोना वायरस ने मौजूदा राजनैतिक, आर्थिक एवं सामाजिक व्यवस्था को खतरे में डाल दिया है।

देश के प्रधानमंत्री ने 24 मार्च 2020 को सिर्फ चार घंटे के नोटिस पर पूरे देश को बंद कर दिया। यहां तक की देश में योजनाओं को बनाने वाले नौकरशाहों ने यह भी नही सोचा कि लोगो को कुछ समय देना चाहिए ताकि वह अपने लिए राशन और जरूरत की चीज़ों का इंतजाम कर सकें। अगर एक हफ्ते का समय भी मजदूर वर्ग को दे दिया गया होता तो जितना जान-माल का नुकसान हुआ है उतना नुकसान नही हुआ होता। इसमें कोई आश्चर्य नही होना चाहिए कि छोटे शहरों से बड़े शहरों में काम करने वाले मजदूर वापस अपने घरों को चले गये। बिना योजना के लगाये गये लॉकडाउन के बाद अपने घर-गाँव जाने के अलावा मजदूरों के पास कोई दूसरा रास्ता नही था जिससे वह अपना जीवन-यापन कर सकते थे।

लॉकडाउन के दौरान प्रवासी मजदूरो की दुर्दशा ने यह दिखाया कि

ना सिर्फ आर्थिक विकास असफल हुआ है बल्कि देश पर शासन करने वर्ग भी समाज को समझने में असफल है। राज्यों द्वारा अपने नागरिकों के साथ किया गया भेदभाव स्पष्ट रूप से दिखा है जिसमें एक तरफ लॉकडाउन के दौरान विदेशों में फंसे नागरिकों को देश वापस लाने के लिए विशेष हवाई उड़ानों की व्यवस्था की जा रही थी, वहीं दूसरी तरफ अपने ही देश में यातायात की सुविधा अचानक से बंद कर देने के चलते दूसरे राज्यों में फंसे मजदूर हज़ारों किलोमीटर पैदल यात्रा करके अपने पैतृक गांव जाने के लिए विवश थे। यह एक ऐसा समय था जिस समय समाज का एक ऐसा तबका जो अपनी ऑनलाइन मीटिंगों के व्यस्त कार्यक्रम से थोड़ा समय निकाल कर अपने आरामदायक घरों में मनोंरजन कर रहें होते थे दूसरी तरफ समाज का बड़ा वर्ग भयंकर गर्मी में अपने दिन-रात फुटपाथ या पेड़ों की छांव के नीचे गुजारना पड़ रहा था।

पी.आर.एस के आकड़ों के अनुसार 22 मार्च 2020 के बाद 1 मई 2020 को सार्वजनिक परिवहन सेवा फिर से चालू कर दी गयी। 1 मई से 3 जून के बीच करीब 58 लाख प्रवासी मजदूर स्पेशल रेल एवं 41 लाख मजदूर सड़क परिवहन से अपने पैतृक निवास पर गये। परन्तु उन मजदूरों का कोई आंकड़ा नही है जो पैदल ही अपने गांव की तरफ चल दिये। उसी दौरान कई सारी ऐसी घटनाए सामने आई जिसमें पता चला की कई प्रवासी मजदूर पैदल यात्रा से घर जा रहे थे रास्ते में उनकी मौत हो गयी। परन्तु देश के प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी ने देश की ससंद में खड़े होकर कहा है कि देश में इस तरह की मौतों का कोई आकड़ा नही है। श्रम मंत्रालय का कहना है कि लॉकडाउन के दौरान करीब 1 से 4 करोड़ प्रवासी मजदूर अपने घरों का वापस गये उसमें से सबसे ज्यादा मजदूर, करीब 32.4 लाख, उत्तर प्रदेश राज्य के थे। सेन्टर फॉर मॉनिटरिंग इडियन इकनामी संस्थान के अनुसार करीब 112 मिलियन लोगो की नौकरी अप्रेल एवं मई 2020 के महीने में चली गयी। वर्ल्ड इकनोमिक फोरम के अनुसार भारत में करीब 139 मिलियन प्रवासी

मजदूर हैं।

यह फैजाबाद में काम करने वाले सामाजिक कार्यकर्ता गुफरान सिद्दीकी का कहना की अपने मूल-निवास को लौट रहे प्रवासी मजदूर बेहद खराब स्थिति में घरों पर पहुंचे है, उन्हें अपनी पैदल यात्रा के दौरान बहुत सारी चुनौतियों और भेदभाव का सामना करना पड़ा, यात्रा के दौरान जब यह मजदूर किसी अज्ञात स्थान पर वहाँ के हैंडपंप से पानी पीने पर स्थानीय लोगो द्वारा खदेड़ दिया जाता था। इनका कहना था कि वापसी के बाद जिन क्वांरटीन सेटरों पर इन मजदूरों को रखा जाता था उन सेटरों की स्थिति भी बहुत बेहतर नही थी इसके अलावा प्रवासी मजदूरो को सरकार द्वारा घोषित अधिकार भी नही मिले।

रामशंकर सूरत के एक कपड़ा मिल में काम कर रहे थे। उत्तर प्रदेश से अधिकतर लोग काम की तलाश में सूरत ही जाते रहे हैं, इसलिए

रामशंकर जी भी पारिवारिक ज़िम्मेदारी और बेहतर जीविका की तलाश में तीस साल पहले सूरत चले गये थे। लॉकडाउन से पहले वो महीने में बारह हजार रुपए तक की कमाई कर लेते थे। रामशंकर जी बताते हैं कि लॉकडाउन के पहले दिन जब जनता कर्फ्यू लगा तो काम रोक दिया गया, और सभी लोग अपने-अपने घरों में बंद हो गये। मार्च महीने के जो 20-21 दिन काम किया था उसी का पैसा उनको दिया गया। इसके बाद बस एक बार ही फैक्ट्री मालिक ने थोड़ा राशन दिया। लेकिन उसके बाद उन्होंने अपने जमा पूंजी से ही गुजारा किया।

घर पहुँचने में इन्हें बहुत सारी कठिनाई का सामना करना पड़ा। रामशंकर जी को किसी परिचित से पता चला कि एक बस है जो सूरत से जौनपुर तक जा रही है और उसमें कुछ सीटें खाली है। इन्होनें भी तुरंत अपनी सीट आरक्षित करवा ली, जिसके किराये के लिए चार हजार

रुपए चुकाने पड़े।

एक मई को बस से इलाहाबाद तक आए, वहाँ से बस सीधे जौनपुर चली गयी। हाइवे पर उतरने के बाद वो लगभग 25 किमी पैदल ही चले। इसी बीच एक ट्रक ड्राईवर से मदद लेकर ये प्रतापगढ़ तक आए, लेकिन ट्रक से उतरते समय अचानक ही नीचे गिर गये जिसके कारण उनका पाँव मूड गया। किसी ने मदद की तो पास के जिला अस्पताल तक पहुँच पाए। वहां डॉक्टर ने उन्हें दवा दी और एक निजी लैब से एक्सरे करवाने को कहा, फिर एक गरम पट्टी बांधकर कुछ गोलियां दे दी, और घर वापस जाने को कहा। उन्होने डॉ से कहा कि पैर में दर्द है और रात होने वाली है इसलिए प्रतापगढ़ से फैजाबाद तक पैदल चल पाना संभव नहीं है। डॉक्टर की इजाज़त से रात उन्होनें अस्पताल के बरामदे में ही बिताई। वह आगे बताते हैं की कोरोना टेस्ट के नाम पर केवल तापमान लिया गया और हाथ पर मुहर लगा दी गयी। रामशंकर अगले दिन एक ई-रिक्शा से नजदीकी शहर तक आए और वहीं से इनका लड़का अपनी मोटर साइकिल से घर तक लेकर आया।

रामशंकर आज पारिवारिक ज़िम्मेदारी और घर पर कोई आय का और जरिया न होने के कारण वापस अपने काम पर सूरत जाना चाहते हें। लेकिन आज भी इनके पैर का दर्द कम नहीं हो पाया है, ना ही पैर की सूजन कम हुई है। जिस कारण वह कोई भी काम नहीं कर पा रहे।

अशोक कुमार सूरत में एक हीरा बनाने वाली कंपनी में हीरों की घिसाई का काम करते रहे हैं। साल 1988 में ही वह अपने घर से भागकर सूरत गये थे। कुछ समय एक चाय की दुकान पर काम किया, और इसी दौरान एक परिचित से मुलाकात हुई, जिसने इन्हें हीरा बनाने वाली एक कम्पनी में काम दिलाया। धीरे-धीरे काम सीखा,

जिससे पूरे महीने भर में बारह से पंद्रह हजार तक की कमाई हो जाती थी। एक हीरे को बनाने का दाम 85 पैसा तक होता था, और पूरे दिन में ये आठ सौ से एक हजार रुपए तक का काम भी कर लेते थे। पिछले बत्तीस सालों से ये ही इनके रोज़ का काम रहा है।

अशोक जी के छह बच्चे हैं – चार लडकियाँ और दो लड़के। दो लड़कियों की शादी हो चुकी है और बाकी बच्चों की पढाई अभी जारी है। जब देश में लॉकडाउन लग गया और काम बंद हो गया तो फैक्ट्री मालिक ने जितने दिन काम किया था उतना ही पैसा दिया। किसी तरह दो महीने गुजारा करने के बाद वे रेल से अपने घर वापस आए। सूरत से घर वापस आने के लिए किसी एजेंट को 750 रुपए अलग से देने पड़े। तब जाकर कहीं रेल का टिकट मिल पाया।

अशोक जी आगे बताते हैं, इस हीरे के काम ने और लॉकडाउन लगने से जीवन का बहुत कुछ छीन लिया। बत्तीस सालों से हीरा बनाते-बनाते आज उनको दिखाई देना भी कम हो गया। लॉकडाउन के बाद आठ महीने उन्होंने बिना काम के गुज़ारा, जिसके बाद वो वापस अपने काम पर चले गये। काम शुरू किया ही था कि आचानक ही लकवे की बीमारी हो गयी जिसके बाद वो घर वापस आ गये। आज अशोक काम पर वापस सूरत जाने की सोच भी नहीं सकते, क्यूंकि जहां पहले वो दिनभर में 800 हीरों की घिसाई का काम कर लेते थे अब पूरे दिन में 200 हीरे तक बनाना भी मुश्किल हो गया।

अशोक जी आज बैंक से लेकर अपने दोस्तों तक के कर्जदार हैं। उनके ऊपर कुल पाँच लाख रूपए का कर्ज़ है। जो उन्होने अपनी बेटी की शादी और बच्चों की पढाई के लिए कर्ज़ लिया था, पर सोचा था कि हर महीने कुछ जमा करके चुकता कर देंगे। अब दो बेटों की पढाई करवानी है जिसमें फीस के 45 हजार रुपया जमा कराना है। लेकिन आज ये हालात हो चुके हें कि घर पर सब्ज़ी खरीदने के लिए भी पैसा नहीं है।

उन्हें अपने घर के आसपास में कोई काम भी नहीं मिल पा रहा।

अशोक जी आज इस बात पर सबसे ज़्यादा चिंतित हैं कि वह अपना कर्ज कैसे चूका पाएंगे, और बच्चों की पढाई कैसे पूरी हो पायेगी। उनकी खुद की ऐसी स्थिति में भी वह काम की तलाश में हैं,और कोई भी काम करने को तैयार हैं। उनके आँखों का इलाज भी बेहद ज़रूरी है।

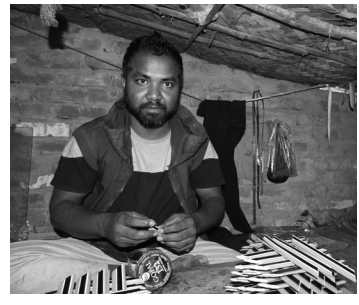

शकील ने बी.ए. तक की पढ़ाई की है। फिलहाल वो जूता बनाने के एक छोटे से कारखाने में काम करते हैं। वह चाहते हैं कि उनका खुद का रोज़गार हो। शकील कुछ साल पहले काम की तलाश में कुवैत भी गये थे। लेकिन वहाँ काम नहीं मिला और इसके उलट जो जमा पूंजी थी वो सब भी खर्च हो गयी। अभी उनके परिवार की स्थिति बहुत अच्छी नहीं है। पिता जी की एक छोटी सी पान की दुकान है उसी के सहारे ही पूरे परिवार की आजीविका चलती है। शकील आगे बताते हैं कि कोरोना महामारी के समय देश की सरकार को मंदिर-मस्जिद जैसे मुद्दों से हटकर जनता के लिए कुछ करना था, लेकिन सरकार ने नहीं किया। जनता मरे या जिये सरकार को इससे कोई फर्क नहीं पड़ता।

अरविंद अमरावती महाराष्ट्र में ईंट भट्ठे पे झुंकाई (आग में कोयला डालने) का काम करते थे। वो पाँच से छह महीना ईंट भट्ठे पर काम करते और फिर वापस अपने गाँव आकर मजदूरी का काम करते थे। इस बीच उन्होनें फैजाबाद में रहकर ही काम करना शुरू किया। लेकिन काम ना मिलने से घर पर पैसों की कमी होने लगी। उन्होने तय

किया कि वो वापस अमरावती में जाकर काम करेंगे। जनवरी 2020 में ही वो काम के लिए फिर से वापस अमरावती गये। जनवरी से जून तक लॉकडाउन में भी उनका काम जारी था। लेकिन मज़दूरों और कच्चे माल की कमी के कारण काम बंद करना पड़ा।

अरविंद बताते हैं कि छह महीने तक काम करने के बाद भी इनके पास कोई बचत नहीं थी। काम का बकाया राशि भी ठेकेदार ने नहीं दिया। अरविंद के पास अपने घर वापिस लौटने के लिए भी पैसा नहीं था जिसके कारण उन्हें ईंट भट्ठे मालिक से दस हजार रुपये उधार लेना पड़ा। बंद के समय कोई भी साधन नहीं होने के कारण अरविंद और उनके तीन दोस्तों ने मिलकर तीस हजार रुपए में एक टाटा सूमो गाड़ी बुक की। जिससे लगभग 1000 कि.मी. की यात्रा करके अमरावती से फैजाबाद तक वापस आ पाये। गाड़ी किराया देने के बाद बाद उनके पास सिर्फ 2500 रुपए ही घर खर्च के लिए बच पाया। उनका कहना है कि लॉकडाउन के बाद ज़रूरी सामान की कीमतें काफी बढ़ हुई हैं जिसके कारण परिवार की रोज़मर्रा की जरूरतों को पूरा कर पाना बहुत मुश्किल हो रहा है।

राम कुमार सब्ज़ी का ठेला लगाते हैं और सब्ज़ी बेचकर ही अपनी आजीविका चलाते हैं। इनकी दो बेटियाँ हैं, जिनकी शादी हो चुकी है। दो साल पहले इनकी पत्नी का देहांत हो गया था। अभी उनका नाती (बेटी का लड़का) उनके साथ रहता है। राम कुमार सुबह ही अपने नाती के साथ सब्ज़ी बेचने के लिए बाज़ार निकल जाते हैं। फिर दोपहर को घर आकर खाना बनाकर अपने नाती के लिए लेकर जाते हैं। फिर शाम को देर रात को घर वापस आते हैं।

राम कुमार पहले फैज़ाबाद में ही रेलवे स्टेशन पर चाय बेचने का काम करते थे। राम कुमार बताते हैं कि, रेलवे से मिले हुए लाइसेंस होने के बाद भी उनसे जी.आर.पी.एफ़ (रेलवे पुलिस) के लोग रोज़ पैसा मांगते थे, जिससे परेशान होकर वह काम छोड़कर इलाहाबाद चले

गये और वहीं एक चाय वेंडर का काम शुरू किया। काम अच्छे से चल ही रहा था कि कोविड महामारी के कारण सब कुछ बंद हो गया। बस किसी तरह इलाहबाद में ही एक महीना गुज़ारा, इस बीच जो कुछ भी जमापूंजी थी वह भी खत्म हो गयी और ठेकेदार ने भी मदद करने से इंकार कर दिया।

जिसके बाद रेलवे के मालगाड़ी चालकों से उन्होने वापस फैज़ाबाद लौटने के लिए मदद मांगी, लेकिन कोई भी उन्हें अपने साथ गाड़ी में लेकर जाने को तैयार नहीं हुआ। आखिरकार जब लगने लगा कि लॉकडाउन खत्म नहीं होगा तो उन्होने पैदल ही इलाहबाद से निकलने की सोची। जो कुछ थोड़े पैसे बचे थे उससे उन्होने दो पैकेट सत्तू के लिए और रास्ते से मूली और हरी मिर्च खरीद कर पैदल ही निकल गये। जहां भी रास्ते में उन्हें पानी मिल जाता वहीं थोड़ी देर रुककर मूली और मिर्च के साथ सत्तू खा लेते। बस उसी के सहारे तीन दिन और दो रात पैदल चलकर वह इलाहाबाद से अपने घर फैज़ाबाद तक आए। राम कुमार आगे बताते हैं कि घर आने के बाद उनके पास खाने-पीने का कुछ भी सामान नहीं था। इस दौरान संगठन और आप पास के लोगों उनकी मदद की।

निष्कर्ष

कोरोना महामारी ने गतिशीलता के लिए संकट पैदा कर दिया है। प्रवासी मजदूरों को जरूरी एवं बुनियादी सुविधाएं मुहैया करवाने में असफल रही सरकार के रवैया सिविल सोसाइटी एवं सं्वयसेवी संस्थाओं के लिए सबक है यह समझने के लिए की व्यवस्था मे कहाँ पर कमी रह गयी जिसके चलते मजदूरों को चुनौतियों का सामना करना पड़ा। संकट की इस स्थिति में सरकार और कॉर्पोरेट मीडिया का गठजोड़ सामने उभर कर आया जिसने हमेशा इन मुद्वों को अनदेखा करने की कोशिश की।

यह मजदूर तबका पहले से कमजोर वर्ग के अन्तर्गत आता है, कोरोना महामारी ने इन मजदूरों के मानसिक स्वास्थ पर असर डाला,

यह मजदूर अनेक डरों से घिरे हुए है कि कही वायरस से संक्रमित न हो जाये, परिवार में सबसे महत्वपूर्ण व्यक्ति की अनुपस्थिति और सबसे ज्यादा खतरनाक स्थिति वह कि बिना मजदूरी के परिवार का भरण-पोषण कैसे कर पायेंगे।

स्वंयसेवी संस्था और यूनियनों को मिलकर राज्य सरकार से सिफारिश करनी चाहिए की प्रवासी मजदूरों के लिए खाना, रहना, स्वास्थय एवं मानसिक स्वास्थय सेवाये उपलब्ध करवाये। प्रवासी मजदूर सरकार द्वारा दिये जाने वाली सामाजिक सुविधाओं से हमेशा ही वचिंत रहे है। असंगठित क्षेत्र के समाजिक सुरक्षा एवं अन्य निर्माण कार्य में लगे मजदूरों के मुद्वो को भी बेहद अनौपचारिक तरीके से लिया जाता है। संस्थाओं को चाहिए की वह एक सटीक आकड़े एकत्र करे एवं ध्यान रखे की प्रवासी मजदूर किसी स्कीम या सुविधाओं से वचिंत ना रह पाएं।

अध्याय - 5

रेहड़ी-पटरी विक्रेता

कोरोना-19 के दौरान लगे लॉकडाउन में अन्य शहरों की तरह फैजाबाद शहर के बाजार भी बंद हो गये थे। सिर्फ चार घंटे के नोटिस पर लगाये गये लाकॅडाउन में रेहड़ी पटरी विक्रेताओं को भारी नुकसान हुआ है। करीब तीन महीने तक पूरे देश की सार्वजनिक परिवहन सेवाएं बंद थी एवं लोगो की आवाजाही पर भी प्रतिबंध था जिसके चलते सड़के सुनसान थी जिसका असर रेहड़ी पटरी विके्रताओं के रोजगार पर भी पड़ा है। रेहड़ी पटरी विक्रेताओं का देश की अनौपचारिक अर्थव्यवस्था मे महत्वपूर्ण भूमिका है, यह कहना बिल्कुल भी गलत नही है कि यह मजदूर भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ है। आई एस एस टी में हुए अध्ययन के अनुसार रेहड़ी पटरी के माध्यम से रोजाना करीब 80 करोड़ रुपये का कारोबार होता है, इसके अलावा प्रत्येक रेहड़ी पटरी विके्रता अन्य तीन लोगो को रोजगार प्रदान करते है चाहे वह भागीदार के रूप में या फिर कर्मचारी के रूप में।

जिस तरह से अन्य कामों के अन्तर्गत मजदूर गांव से शहरों की और पलायन करते है उसी तरह से रेहड़ी पटरी का काम करने वाले मजदूर भी गांव से शहरों की तरह काम के लिए पलायन करते हैं। शहरों में काम करने के लिए जिस रेहड़ी, गाड़ियां या छोटे वाहनो में सामान रख कर बेचते है उनका मजदूरों को किराया देना पड़ता है। हांलाकि लॉकडाउन के दौरान सरकार ने मकान मालिकों से अपील की थी कि वह किराये पर रहने वाले लोगो से किराया ना लें बावजूद इसके मकान

मालिकों ने इन मजदूरों से किराया वसूलने में बिल्कुल भी कोताही नही बरती।

लॉकडाउन के दौरान इन मजदूरों पर सिर्फ आर्थिक प्रभाव ही नही पड़ा बल्कि यह सामाजिक रूप से भी कमजोर हुए हैं। क्योकि पूरे देश भर में पूर्ण रूप से प्रतिबंध लगा दिया गया लोगो का घरों से निकलना भी वर्जित था। इस स्थिति में पुलिस और प्रशासन का रैवेया इन मजदूरों के साथ बेहद अमानवीय एवं कूरर था।

यहां तक कि वह रेहड़ी पटरी विक्रेता जो जरूरी सामान जैसे सब्जियां, फल आदि बेच रहे थे उन्हें भी पुलिस द्वारा प्रताड़ित किया गया एवं उनसे जुर्माना वसूला गया, इस तरह के व्यवहार को सही सिद्व करते हुए प्रशासन द्वारा कहा गया कि यह व्यवस्था बनाये रखने के लिए जरूरी कदम है।

रेहड़ी पटरी विक्रेताओं के लिए लॉकडाउन शुरू से ही बहुत सख्त रहा है। इन मजदूरों द्वारा जो कुछ जमा पूँजी थी वह इस अवधि के दौरान अपने परिवार के भरण-पोषण करने में खत्म हो गयी। हांलाकि इस महामारी से पहले भी मजदूरों के लिए बेहतर शिक्षा एवं स्वास्थय सुविधाओं का अभाव था एवं मजदूरों की पहुंच के बाहर थी। इस महामारी के दौरान मजदूरों की स्थिति और ज्यादा दयनीय हो गयी है, यंहा तक की इन मजदूरो को अपने परिवार का भरण-पोषण करने और बुनियादी जरूरतों को पूरा करना भी भारी पड़ रहा है।

आशिश कुमार फैजाबाद में असंगठित क्षेत्र के मजदूरों के मुद्दों पर काम करते है, इनका कहना है कि करीब चालीस हजार मजदूर फैजाबाद में रेहड़ी पटरी लगा कर काम करते है। इनका मानना है कि यदि सरकार योजनाबद्व तरीके से एवं कुछ समय मजदूरों को देते हुए लॉकडाउन लगाती तो निश्चित तौर पर इतना नुकसान नही होता जितना अचानक से लगाये गये लॉकडाउन के दौरान हुआ है।

विजय पिछले 30 सालों से सब्ज़ी बेचने का काम कर रहे हैं। इनके परिवार में सात लोग हैं, जिनकी ज़िन्दगी सब्ज़ी बेचने पर ही निर्भर है। कोविड महामारी के दौरान स्कूलों की पढ़ाई ऑनलाइन हो गयी। पर विजय के पास ना तो स्मार्ट फोन था और ना ही इतने पैसे थे कि वह एक नया मोबाइल खरीद सकें, जिस कारण उनकी बड़ी बेटी की पढ़ाई छूट गयी।

विजय बताते हैं कि लॉकडाउन के समय उनका जीवन और अधिक कठिन परिस्थितियों में गुज़रा। वह अपने बेटे के साथ रात में एक बजे सब्ज़ी मंडी चले जाते थे। कोविड के समय अधिकतर मंडियों में रात को ही सब्ज़ी मिल पाती थी। आजीविका चलाने के लिए सब्ज़ी बेचना ही एक मात्र उपाय था। लॉकडाउन के समय पुलिस के भय से गलियों में छुप-छुपाकर सब्ज़ी बेचकर अपना गुज़ारा किया। इस दौरान सबसे बड़ी चुनौती यह थी कि अंडे, फल और घरेलू समान बेचने वाले कई छोटे दुकानदार और प्रवासी मज़दूर भी सब्ज़ी बेचकर अपना गुज़ारा कर रहे थे। इसका सीधा असर विजय के व्यवसाय पर भी पड़ा। कई दफा ऐसा भी हुआ की सब्ज़ियाँ बिकी ही नहीं। गर्मी के कारण बची हुई सब्जियों खराब हो जाती थी जिसके चलते उसको फेकना भी पड़ता था।

विजय बताते हैं कि पिछले छः महीने से अपने घर का बिजली बिल भी जमा नहीं करा पाए हैं। नगरपालिका द्वारा मकान टैक्स का का नोटिस भी आया है, जो कि पिछले साल नहीं आया था। उन्होने दो साल का टैक्स इकट्ठा जमा कराने के लिए साहूकार से ब्याज पर पैसे लिए हैं।

अशफाक एक सब्ज़ी का ठेला लगाते हैं और उसे घर-घर जाकर बेचते हैं, जिससे पूरे परिवार का गुजारा चलता है। इनका पाँच लोगों का परिवार है, जो किराए के एक कमरे में रहता है। अशफाक बताते हैं कि लॉकडाउन से पहले वो दिन भर का लगभग 300 से 400 रूपए तक कमा लेते थे। उससे उनका घर खर्च चल जाता था। आज वो रोज का 400 से 500 रुपए तक कि कमाई कर लेते हैं लेकिन आज इतने पैसों में भी घर खर्च चलाना मुश्किल हो गया है, क्यूंकी तेल, आटा, चावल जैसी जरूरी चीजें बहुत महंगी हो गयी हैं।

लॉकडाउन के दौरान इन्हें काफी नुकसान भी उठाना पड़ा। कई बार सब्ज़ी नहीं बिकने के कारण सब्जियां खराब होकर सड जा रही थी। पुलिस के डर से गलियों में छुपते हुए जाना पड़ता था, तब कहीं जाकर सब्ज़ी बेच पाते थे। अशफाक आगे बताते हैं कि लॉकडाउन के समय सब्ज़ी लाना और उसे बाजार तक ले जाकर बेचना सबसे बड़ी चुनौती थी। वो लोग रात को ही सब्ज़ी मंडी चले जाते थे और पूरी रात वहाँ गुजारने के बाद ही तब कहीं जाकर सब्ज़ी मिल पाती थी। इसके लिए कई बार पुलिस के डंडे खाने पड़े जिसका दर्द आज भी कई दफा महसूस होता है। ये सब बताते हुए वो काफी भावुक हो गये।

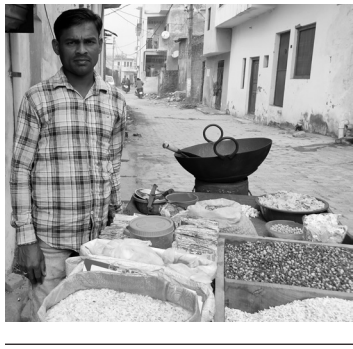

सुभाष एक चना बिक्रेता है। इनके परिवार में 8 लोग हैं जिसके भरण-पोषण का पूरा ज़िम्मा एक व्यक्ति की कमाई पर ही निर्भर है। लॉकडाउन से पहले वो दिनभर में लगभग 500 रूपए तक कमाते लेते थे। लेकिन अब वो दिनभर में केवल 200 रूपए

ही कमा पा रहे हैं। सुभाष बताते हैं कि लॉकडाउन के दौरान वो अपने घर का किराया नहीं दे पाए जिसके लिए उन्हें बहुत सारी समस्याओं का सामना करना पड़ा। आज भी पैसे की कमी के कारण उनके बच्चे स्कूल नहीं जा पा रहे हैं। सुभाष आगे कहते हैं कि इस लॉकडाउन के कारण उनका जीवन कई साल पीछे चला गया।

निष्कर्ष

इस महामारी से पहले की रेहड़ी पटरी मजदूर अपने हक अधिकारों के लिए संघर्ष कर रहे थे। उन्हें पहले से ही रिश्वत, उनके सामान को जब्त कर लेना आदि दिक्कतों का सामना करना पड़ रहा है। सरकार द्वारा रेहड़ी-पटरी व्यवसाय को फिर से जीवित करने क लिए सरकार ने पांच हजार करोड़ रुपये के पैकेज की घोषणा की ताकि अपने काम को शुरू करने के लिए विक्रेताओं को शुरूआत में दस हजार रुपये दिये जाये। लेकिन हमे अपनी फैजाबाद की यात्रा के दौरान एक भी लाभार्थी नही मिला जिसने इस योजना का लाभ उठाया हो।

केन्द्र सरकार और राज्य सरकार को चाहिए की वह रेहडी पटरी विक्रेताओं को मार्केट के नजदीक जगह दे, मुनसिपालिटी द्वारा पहचान पत्र दिया जायें ताकि पुलिस या अन्य प्रशासनिक अधिकारियों द्वारा इनका शोषण ना हो सके। राज्य सरकार और केन्द्र सरका को एक कमेटी का गठन करना चाहिए एवं रेहड़ी पटरी विक्रेताओं के मुद्दों का अध्ययन करते हुए इन मजदूरों के हक में कानून बनने चाहिए। सरकार को इन्हें स्वास्थय, शिक्षा एवं पेशन योजनाओं में शामिल करने का प्रयास करना चाहिए ताकि इन्हें बराबारी का मौका मिल सके।

अध्याय - 6

घरेलू श्रम करने वाले

गृहणी महिलाओं का काम कभी ना खत्म होने वाले काम है। समाज में महिलाओं को हमेशा ही पित्रसत्ता के ताले में बंद रखा गया है। भारतीय महिलायें हमेशा ही अपने पति, बच्चों और पति के माता-पिता की सेवा करने के लिए साथ-साथ एक पैर पर खड़ी होकर अन्य घरेलू काम भी करती है। समाज ने सदैव ही गृहणी महिलाओं के काम को श्रम के अन्तर्गत मानने से इंकार किया है, अन्य शब्दो में कहा जा सकता है कि महिलाओ के इस श्रम को ना ही कोई मान्यता है ना ही कोई वेतन और ना ही किसी तरह का कोई प्रोत्साहन दिया जाता है। सरकार द्वारा देशव्यापी लॉकडाउन का असर लगभग सभी समुदाय एवं लोगों पर हुआ परन्तु गृहणी महिलाओं के लिए ज्यादा बदलाव नही था, बल्कि इन महिलाओं के लिए घर के बढ़ते कामों के बोझ का वही पुराना खेल था।

लॉकडाउन की अवधि में हर वर्ग के मजदूरों पर प्रभाव पड़ा परन्तु यह गृहणियां ही थी जिनका काम कभी नही रूका बल्कि समय के साथ बढ़ता ही चला गया। यदि हम लॉकडाउन के दौरान हम गृहणियों के काम को मापने की कोशिश करें तो यह नामुकिन पायेंगे। पारंपरिक समाज की तरह आज के इस आधुनिक समाज में भी गृहणियों के काम को मान्यता नहीं मिल पा रही है। लोगो का मानना है कि परिवार एवं बच्चों को प्यार देखभाल करने को हमें एक काम के तरह से नही लेना चाहिए उसका पैसा नही मिलना चाहिए, यदि हम लोगो के इस तर्क को ध्यान में रखे तो यह तर्क देश की सीमा पर तैनात रक्षा बलो पर

भी लागू होना चाहिए उन्हें भी उनकी सेवा के बदले पैसा वेतन नही मिलना चाहिए क्योकि वह भी मातृभूमि की रक्षा कर रहे है। पर ये सुनकर अजीब लगता है – तो महिलाओं के उस श्रम का क्या जिससे हर परिवार, समाज और देश हर रोज़ बाहर काम पर जा पाता है, जहाँ महिलाएं श्रम के पुनरुत्पादन में लगी हैं।

इस महामारी के दौरान मजदूर वर्ग के घरो की गृहणीयां सबसे ज्यादा प्रभावित हुई है। राष्टीय महिला आयोग के आकड़ो के अनुसार घरेलू हिंसा के मामलों में लॉकडाउन के दौरान करीब 5 प्रतिशत की वृद्वि हुई है। हिंदी अखबार के आंकड़ों के अनुसार लॉकडाउन के पहले चार चरणों के दौरान घरेलू हिंसा के मामले में पिछले दस वर्षो की अपेक्षा अधिक मामले दर्ज हुए है। यह आकड़े दर्ज की गयी शिकायतो के आधार पर निकाले गये है जोकि असल में हुई घरेलू हिंसाओं का मात्र एक सिरा है क्योकि घरेलू हिंसा का शिकार करीब 86 प्रतिशत महिलाएं कहीं पर भी औपचारिक रूप से शिकायत दर्ज नहीं करवाती है। इस लॉकडाउन के दौरान फैजाबाद में कई परिवार टूटे और परिवारों को दोबारा से जोड़ने की पूरी जिम्मेदारी महिलाओं पर छोड़ दी गयी।

किरन चावला की उम्र 20 साल है। इन्होने बी.कॉम. की पढ़ाई की है और वह एक 8 x 12 फीट के कमरे में किराए पर रहती हैं। इस छोटे से कमरे में ही घर का किचन, बेडरूम, डाइनिंग रूम और मेहमान कक्ष सब समाहित है। घर में किरन के साथ मम्मी-पापा और छोटा भाई रहते है। केवल दो जोड़ा बिस्तर और बिछाने के लिए दो दरी ही हैं, जिसे उन्होने आज बाहर निकाला था ताकि हम लोग वहां बैठ सकें। पिता जी फैज़ाबाद में ही एक छोटे से ढाबे में काम करते हैं, जहां 14 घंटे की मेहनत के बाद प्रति दिन के हिसाब से 150 रुपया

ही मिल पाता है। घर चलाने के लिए किरन आस-पास के बच्चों को ट्यूशन पढ़ाती हैं। किरन का सपना है कि वो नौकरी करके परिवार की जिंदगी बेहतर बना पाए, इसलिए वो काफी समय से किसी नौकरी की तलाश में भी हैं।

कोरोना संकट के कारण लॉकडाउन लगने के बाद इनके पिता जी का काम छूट गया, साथ ही बच्चों को ट्यूशन पढ़ाने से होने वाली कमाई भी बंद हो गयी। किरन बताती हैं कि पैसे की कमी के चलते घर की रोज़मर्रा की ज़रूरतें पूरी नहीं हो पा रही थी, इसलिए लॉकडाउन में घर पर लड़ाई-झगड़े भी बढ़ गये। इन सब से परेशान होकर माँ और पापा घर छोड़कर चले गये। किरन आगे बताती हैं कि घर पर चाय, चीनी, दूध, सब्जी, चावल जैसी ज़रूरी चीज़ें नहीं होने से बहुत मुश्किलें आने लगी। एक तो घर की सीमित आय और दूसरी ओर से काम भी बंद, ऐसे में घर का किराया चुकाना भी मुश्किल हो रहा था। इस कारण किरन की पढ़ाई भी छूट गयी है। किरन की मम्मी आज भी इस बात से काफी दुखी हैं कि वो अपने बच्चों को मुश्किल में घर पर अकेला छोड़कर चली गयी।

बिनिता एक हाउस वाइफ़ हैं जो अपने पति आनंद और बच्चों के साथ एक किराए के घर में रहती हैं। आनंद इलेक्ट्रीशियन का काम करते हैं। बिनिता एक दलित परिवार से आती हैं और उन्होने आनंद से प्रेम विवाह किया था इस कारण उन्हें और उनके पति को उनके देवर ने परिवार की संपत्ति से बेदखल करवा दिया।

पिछले आठ महीने से बिनिता ना तो घर का किराया दे पाई हैं और ना ही बच्चों के स्कूल की फीस। लॉकडाउन के बाद से उनके पति को कहीं भी काम नहीं मिल पा रहा है, जिस कारण बिनिता को भी अब

आस-पास के घरों में साफ-सफाई का काम करना पड़ रहा है। बिनिता बताती हैं कि उन्होने अपने जीवन में कभी भी बाहर जाकर लोगों के घरों में काम नहीं किया लेकिन आज बच्चों के खातिर उन्हें यह करना पड़ रहा है। जब हमने उनसे पूछा कि क्यूँ नहीं आप बच्चों को सरकारी स्कूल में दाखिल करवा दें रहीं, तो उनका कहना था कि बच्चे पहले से ही निजी स्कूल में पढ़ रहे थे। सरकारी स्कूल की पढाई हिन्दी मीडियम में होने के कारण अब बच्चों का सरकारी स्कूल में पढ़ पाना संभव नहीं है।

बिनिता आगे बताती हैं कि कोविड के बाद उनकी जिंदगी काफी मुश्किल दौर में चली गयी है। उनके पति ने जीवन-भर की जमापूंजी से एक बिजली उपकरण की दुकान किराए पर ली थी, मुश्किल से दो महीना ही गुज़रा था कि लॉकडाउन लग गया जिस कारण दुकान का किराया भी निकाल पाना मुश्किल हो गया। अंत में आनंद को दुकान बंद करनी पड़ी और परिवार की सारी जमापूंजी भी खत्म हो गयी। घर के किराए के दो हज़ार रुपये सहित तीन बच्चों की स्कूल की फीस कुल मिलाकर एक महीने का 5600 रुपए हो जाता है, ऊपर से राशन, सब्ज़ी और दवा का खर्च अलग। आज वह अपने मकान-मालिक से लेकर स्कूल तक के कर्ज़दार बन चुके हैं। कोविड के बाद घर चलाना काफी मुश्किल हो गया है। कभी-कभी तो ऐसी भी नौबत आ गयी कि राशन खत्म हो गया और अगले दो-तीन दिन एक समय खाना खाकर ही गुज़ारा करना पड़ा।

अवध पीपल्स फोरम द्वारा इन लोगों को राशन और 5000 रुपये की नगद सहायता राशि दी गयी थी। इस विश्वास के साथ कि आने वाले समय में वो अपने घर और स्कूल का कर्ज चुकता कर देंगे, आज बिनिता घरों में काम करके अपने पति के साथ अपना घर चला रही हैं, और साथ ही बच्चों की पढ़ाई भी जारी रखी है।

मुन्नी बेगम एक गृहणी हैं, वह अपनी मां, पति पप्पू सोनकर और पांच साल के बेटे के साथ रहती हैं। पप्पू जी के परिवार ने शादी में अपनी

मर्जी नहीं दी। इस अंतर-धार्मिक विवाह के चलते मुन्नी बेगम के ससुराल वालों ने परिवार की संपति से भी बेदखल कर दिया। फैज़ाबाद जैसी जगह में एक हिंदू-मुस्लिम जोड़े के बीच विवाह तनाव पैदा कर सकता था, और इलाके में अराजकता पैदा हो सकती थी, लेकिन इन दोनों ने कभी इस बात की आशंका नहीं जताई और सभी के खिलाफ जाकर एक दूसरे से शादी कर ली। आज दोनों पति पत्नी मुन्नी जी की मम्मी के घर पर ही रह रहे हैं।

मुन्नी जी का कहना है कि लॉकडाउन उनके जीवन में कई दुखों को लेकर आया है। बंद के दौरान उन्हें राशन की कमी का सामना करना पड़ा। इसी दौरान राशन की कीमत भी बहुत महंगी हो गयी।

मुन्नी जी एक सरकारी अस्पताल में अपने साथ हुई घटना को याद करते ही फूट-फूट कर रोने लगी। उन्होनें बताया कि एक बार अचानक उनकी तबीयत काफी ज्यादा बिगड़ गयी, तो उनके पति उनको अस्पताल लेकर गये। काफी गुहार लगाने के बाद किसी तरह से अस्पताल में भर्ती कराया गया, किन्तु इसके बाद भी किसी डॉक्टर ने देखा तक नहीं। जब भी डॉक्टर के पास गये तो कुछ दूरी पर रहने के लिए कहा जाता था। इलाज के नाम पर केवल ग्लूकोस की एक बोतल चढ़ाई गयी। दो दिन भर्ती रहने के बाद डॉक्टर ने उनको डिस्चार्ज करने का दबाव बनाया, जिसके कारण वो बिना इलाज के ही घर वापस आ गये।

जनातुन नेसा टांडा में एक छोटी सी दुकान चलाती हैं। लॉकडाउन के दौरान सबसे ज्यादा मार छोटे दुकानदारों पर पड़ी है। उन्होंने एक साल पहले दुकान शुरू की थी, जब उनके पति को मधुमेह का पता चला और उनका स्वास्थ्य बिगड़ गया। उस समय इलाज और दुकान शुरू करने के लिए पैसों का इंतजाम करने के लिए उन्हें अपनी जमीन और पावरलूम बेचना पड़ा। लेकिन लॉकडाउन के कारण, उनकी दुकान में बिक्री कम हो गयी और उन्हें भारी नुकसान उठाना पड़ा क्योंकि कोविड-19 की आशंकाओं ने वस्तुओं की बिक्री को गंभीर रूप से प्रभावित किया है।

लॉकडाउन के दौरान उनके पति की तबीयत और भी खराब हो गयी। वे बहुत कठिनाइयों के बाद कर्फ्यू के बीच में उसे स्थानीय अस्पताल ले जाने में कामयाब रही। जब वे अस्पताल पहुंचे तो स्टाफ ने उनके साथ बेहद अभद्र व्यवहार किया। डॉक्टर जांच के लिए नहीं आए और कंपाउंडर ने उनके चेहरे पर दरवाजा बंद कर दिया। स्थानीय अस्पताल जांच की प्रारंभिक प्रक्रिया के बिना ही मरीज को पीजीआई अस्पताल रेफर करना चाहता था। बाद में उन्हें उनके पति को वापस घर लाना पड़ा और कुछ ही महीनों के भीतर नवंबर 2020 में उनका निधन हो गया।

वह अब अकेली है और दुकान से होने वाली आय पर गुजारा कर रही है। उन्हे अपनी दुकान फिर से शुरू करने के लिए पचास हजार रुपये की जरूरत है। उसने विधवा पेंशन के लिए कई फॉर्म भरे हैं लेकिन अभी तक कोई पैसा नहीं मिला है।

निष्कर्ष

महिलायें पुरुषों की तुलना में परिवार की देखभाल एवं घरों के कामों में ज्यादा समय देती है, इसके लिए इन्हें मेहनताना नही मिलता है और न ही इनके काम को पहचान मिलती है। गृहणियों के इन मुद्दों को सरकार के हस्तक्षेप से हल नही किया जा सकता है इसके लिए समाज को संवेदनशील एवं महिलाओं के प्रति व्यवहार में बदलाव लाकर ही संभव किया जा सकता है। राज्य सरकार को लॉकडाउन के दौरान महिलाओं के साथ होने वाले दुर्व्यवहार एवं घटनाओं से सबक लेना चाहिए एवं सामाजिक संगठनों के साथ युद्व स्तर पर काम करना चाहिए ताकि गृहणियों के द्वारा किए जाने वाले कामों को पहचान मिलें। इस बदलाव के लिए जमीनी स्तर पर युद्वस्तर पर काम करने की जरूरत है, इसके लिए प्रशासन एवं स्थानीय समुदाय आधारित संगठनों को साथ-साथ मिलकर काम करना पड़ेगा, नही तो इस समाज में महिलाओं की स्थिति में बदलाव कभी संभव नही होगा।

अध्याय-7

अनौपचारिक क्षेत्र के कुशल श्रमिक

भारत में करीब 93 प्रतिशत मजदूर असंगठित क्षेत्र के तहत काम करते हैं। यह लोग ज़्यादातर मजदूर गरीब और कमजोर वर्ग से आते है। भारतीय श्रम बल और अर्थव्यवस्था में असंगठित क्षेत्र के तहत काम करने वाले मजदूरों का महत्वपूर्ण योगदान है। नोटबंदी एवं जी एस टी कानून आने से इन मजदूरों की आर्थिक स्थिति पहले ही चिंताजनक थी परन्तु कोरोना महामारी के दौरान लगे लॉकडाउन से इन मजदूरों की आर्थिक स्थिति और ज्यादा खराब हुई है।

असंगठित क्षेत्र के मजदूरों के हितों को ध्यान में रखते हुए जो कानून बने हुए है बावजूद इसके इन मजदूरों को सरकार द्वारा चलाई जा रही योजनाओं का लाभ नही मिल पा रहा है। यह मजदूर हमेशा ही आर्थिक एवं सामाजिक स्तर पर हाशिये में रहते है। ऐसे मजदूर जो बहुत कम वेतन लेकर काम कर रहे थे वह ज्यादा प्रभावित हुए हैं।

ऐसे कामगार मजदूर जो छोटी-छोटी दुकानों, केबल ऑपरेटर, बिजली ठीक करने आदि क्षेत्रों मे काम करने वाले मजदूर – उनका कोरोना महामारी के चलते क्या-क्या असर हुआ है यह बहस से बाहर है। जहाँ घरेलू कामगार, सिक्योरिटी गार्ड, माली, आदि मजदूरों के सदंर्भ में चर्चा हुई है वही पर फैजाबाद उपनगरीय शहर में अपना रोजगार चलाने वाले और रोजना के आधार पर मजदूरी पाने वाले मजदूरों के सदंर्भ में बहुत कम चर्चा हुई है।

कोरोना महामारी से उत्पन्न हुई स्थिति युद्व से उत्पन्न हुई स्थिति से

भी ज्यादा बद्तर थी, यहां तक की यह स्थिति 2007 में आई वैश्विक मंदी से भी ज्यादा भयावह थी। एक्शन ऐड स्वंय सेवी संस्था द्वारा किये गये एक अध्ययन से पता चलता है कि करीब अस्सी प्रतिशत मजदूर जो असंगठित क्षेत्र के तहत काम करते थे उन्हें लॉकडाउन के दौरान अपनी नौकरी से हाथ धोना पड़ा। ज्यादातर मजदूरों की स्थिति यह है कि वह लॉकडाउन से पहले ही उनकी कमाई इतनी नही थी कि वह अपने परिवार का भरण-पोषण व्यवस्थित तरीके से कर पाते। लॉकडाउन लगने के बाद इन मजदूरों के प्राथमिक आय का ना सिर्फ ज़रिया खत्म हो गया बल्कि इन मजदूरों के जीवन यापन करने के लगभग सभी रास्ते बंद हो गये। इसके अलावा लॉकडाउन के दौरान जरूरी वस्तुओं के दाम में भी अचानक से वृद्वि हो गयी।

गंगाराम जी का सात लोगों का परिवार है। गंगाराम अपने बड़े बेटे के साथ मिलकर अपना घर खर्च चलाते हैं। लॉकडाउन से पहले वह एक कपड़े की दुकान पर काम करते थे और उनका बड़ा बेटा एक ठेकेदार के यहाँ काम करता था। लॉक डाउन के बाद से ही दोनों का काम बंद हो गया। गंगा राम जी की पत्नी पिछले छः महीने से बीमार हैं। उनको पथरी की बीमारी हो गयी थी, जिसके लिए उन्हें अस्पताल ले जाना पड़ा। डॉक्टर की सलाह पर एक सरकारी अस्पताल में उनका ऑपरेशन हुआ, लेकिन सभी ज़रूरी दवाई बाज़ार से लेनी पड़ी जो बहुत ही महंगी थी।

गंगा राम जी बताते हैं कि उनकी जो भी जमापूंजी थी वह सब लॉकडाउन के दौरान खर्च हो गयी। घर पर खाने-पीने की काफी परेशानी होने लगी। कोविड के शुरुआती दौर में तो थोडा खाने का समान उनके दुकान के मालिक ने दिया था, लेकिन फिर वो भी टालमटोल करने

लगे। जहां इनका बेटा काम करता था, वो ठेकेदार भी बिना पैसा दिए ही भाग गया। अवध पीपुल्स फोरम से मिली मदद के चलते उनका परिवार भूखा नहीं रहा, और उन्हें समय से खाने पीने की मदद मिलती रही।

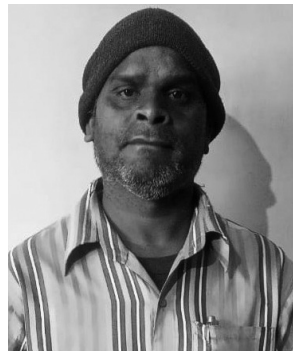

राजकुमार पेशे से बिजली मिस्त्री हैं। इनका आठ लोगों का परिवार है जहाँ पूरे घर का खर्चा केवल एक व्यक्ति की कमाई से ही चलता है। राजकुमार पिछले 10 साल से एक बिजली दुकान में दिहाड़ी पर काम करते थे जिससे वह महीने में सात से आठ हज़ार रुपये कमा लेते थे।धीरे-धीरे कुछ बचत करके उन्होने फरवरी 2020 में ही एक दुकान किराए पर लिया और खुद का काम शुरू किया। जब देशभर में लॉकडाउन लगा तो दुकान का किराया तक दे पाना उनके लिए मुश्किल हो गया, जिस कारण उन्हें दुकान बंद करनी पड़ी। इससे उन्हें तकरीबन डेढ़ लाख रुपये का नुकसान हो गया और साथ ही जो बचत की हुई रकम थी वह सब खत्म हो गयी।

राजकुमार आज दिहाड़ी मजदूरी पर भी काम करने को तैयार हैं, बाजार बंद होने के कारण पिछले सात-आठ महीने से कहीं पर काम भी नहीं मिल प रहा है। राज कुमार कहते हैं कि कोविड आने के बाद से लोग भी पूरे उत्साह से त्योहार भी नहीं मना रहे हैं। ऐसे में उन जैसे कई लोगों को काफी नुकसान हुआ है। फिर भी उन्हें उम्मीद है कि कुछ समय बाद सब ठीक हो जाएगा। वो कहते हैं कि अभी दीवाली का पर्व आने वाला है, शायद उस समय कुछ काम मिलने लगेगा।

राजकुमार आगे कहते हैं कि अगर इस संकट के समय उनके आस-पास के लोग और मदद के लिए संगठन नहीं होता तो पता नहीं उनके जैसे कितने ही लोग भूखे मर जाते। संगठन और उनसे जुड़े लोगों से मिली मदद को वह जीवन भर नहीं भुला सकते हैं।

सुनील पिछले 14 साल से टैक्सी चलाने का काम करते हैं। इनका 14 सदस्यों से भरा-पूरा एक परिवार है। सुनील कहते हैं कि लॉकडाउन लगने से उन जैसे टैक्सी चालकों पर भारी असर

पड़ा है जिनकी आजीविका टैक्सी पर ही निर्भर है। कोविड के बाद छह महीने तक उन्हें बिना किसी काम के घर पर ही बैठना पड़ा। सुनील आगे बताते हैं कि तालाबंदी लागू करने से पहले सरकार को कम से कम अपने नागरिकों को सूचित करना चाहिए था। सुनील का लॉकडाउन के प्रति आशावादी नजरिया भी है। वो कहते हैं कि लॉकडाउन लगने से देश में प्रदूषण कम हो गया है।

अज़ीज़ उल्ला बीस साल से जूते बनाने का काम कर रहे हैं। लेकिन पूरे साल भर में केवल दो से तीन महीने ही ये काम मिल पाता है। बाकी आठ से नौ महीने वो गुजारे के लिए रेडी लगाते हैं। लॉकडाउन के बंद के बाद पिछले आठ महीने से इनके पास कोई काम नहीं था, इस बीच

उनकी जमा पूंजी भी खत्म हो गयी।

इस बीच लोगों से उधार मांग कर घर का खर्च चलाना पड़ा। लेकिन यह पैसा भी परिवार

के दुखों को कम करने में पर्याप्त नहीं हो पाया। इस बीच वह काफी अधिक बीमार भी हो गये, लेकिन इन्हें सबसे अधिक दुःख इस बात का हुआ कि उन्हें अस्पताल में डॉक्टर ने देखने के लिए भी मना कर दिया।

अवध पीपुल्स फोरम ने काफी मदद की। कुछ नगद पैसा और राशन उपलब्ध कराया। अजीज बताते हैं कि सरकार ने सभी कल कारखानों को बंद कर दिया गया था क्योंकि सरकार की लघु और मध्यम उद्योगों को बचाने की कोई योजना नहीं थी। सरकार ने अनियोजित लॉकडाउन लगाकर देश के गरीब लोगों के साथ बहुत बड़ा विश्वासघात किया है।

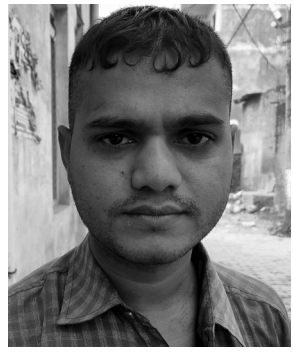

अलीम पिछले पाँच वर्षों से एक सैलून की दुकान चलाते हैं। आलिम कहते हैं कि लॉकडाउन से पहले वो ठीक-ठाक कमाई कर लेते थे। लेकिन कोरोना फैलने के डर से लोगों का आना कम हो गया है। लॉकडाउन की घोषणा के बाद उनको अपनी दुकान तीन महीने के लिए बंद करनी पड़ी। आय का कोई अन्य स्रोत भी नहीं होने के कारण इन तीन महीनों के दौरान उन्होंने अपने घर पर ही ग्राहकों के बाल काटने शुरू किया ताकि उनका घर खर्च चल सके। अलीम बताते हैं की कोरोना वायरस के डर ने आज उनका पेशा बुरी तरह प्रभावित हुआ है। अलीम आगे कहते हैं कि इंशाल्लाह अगर कोरोना की दवा बन जाएगी तो सब कुछ ठीक हो जाएगा।

अजय पन्द्रह सालों से केबल ऑपरेटर का काम कर रहे हैं। चार लोग का परिवार है। अजय जी लॉकडाउन से पहले महीने का औसतन पन्द्रह हजार रुपया कमाते थे। लेकिन लॉकडाउन के बाद उनकी कमाई आधी हो गयी। क्योंकि इस बीच लोगों ने टीवी रीचार्ज करना ही बंद कर दिया। लोगों के पास भी आय का जरिया नहीं था।

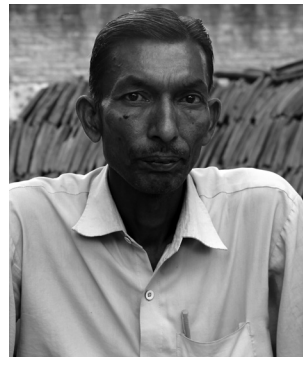

अजय बताते हैं लॉकडाउन एक ऐसा दौर था जब लोग अपने परिवार का पेट भरने के लिए संघर्ष कर रहे थे, लोगों के लिए प्राथमिकता में मनोरंजन बिल्कुल भी नहीं था। उन्होंने कहा, 'पहले भोजन फिर ना मनोरंजन..गरीब खाना जुटाएगा या टी.वी. देखेगा?' अजय आगे बताते हैं कि वह आज भी वह अपने बचत के पैसों से ही अपना घर खर्च चला रहे हैं। उनको उम्मीद थी कि सरकार गरीब परिवारों के बच्चों की स्कूल फीस, घरों के बिजली बिल माफ करेगी, लेकिन ये सब उम्मीदें बेकार थी। राहत के नाम पर सरकार थोड़ी बहुत खिचड़ी बांट रही थी जो कि एक परिवार को खाने के लिए भी पर्याप्त नहीं है। लेकिन ऐसे समय में अवध पीपल्स फोरम और कुछ अन्य गैर-सरकारी संगठन जरूरतमंदों को बचाने के लिए आगे आए।

त्रिभुवन एक साइकिल मेकैनिक का काम करते थे। इनकी पत्नी एक घरेलू कामगार का काम करती हैं। लॉकडाउन के बाद से साइकिल की जिस दुकान पर ये काम करते थे वो बंद है, और पत्नी का काम भी बंद हो गया। पूरे घर की आजीविका इन्हीं दोनों की कमाई पर निर्भर है। इनकी पाँच लडकियाँ हैं जिसमें से दो की शादी हो चुकी है, और तीसरी लड़की की शादी होनी थी, लेकिन लॉकडाउन के कारण शादी रुक गयी।

त्रिभुवन जी बताते हैं कि इस बीच उन्होने दिहाड़ी पर मजदूरी का काम करना शुरू किया है, कभी काम मिलता है और कभी नहीं भी मिलता है। घर में पिता हैं जो काफी समय से बीमार हैं, चारपाई से उठना

भी उनके लिए संभव नहीं है। त्रिभुवन जी आगे बताते हैं कि पैसों कि कमी के कारण पिताजी की दवा का इंतजाम भी नहीं कर पा रहे हैं। बस किसी तरह से अपनी आजीविका जुटा रहे। कुछ राशन उनको सरकारी गल्ले से मिल जाता, उसी से परिवार की भूख मिटा लेते हैं।

जब हम लोग उनके पास गये तो वो अपने पड़ोस के घर पे काम कर रहे थे। लड़की की शादी रुक जाने का दुःख इस कदर इनके ज़हन में है कि वह बात करते हुए अपने आंसू भी नहीं रोक पाये।

राम लोटन जी लगभग 20 वर्षों से दिहाड़ी मज़दूरी का काम कर रहे हैं। अपनी पत्नी के साथ एक छोटे से 10x10 फीट के कमरे में रहते हैं। इनकी चार बेटियों हैं जिनकी शादी हो चुकी है। राम लोटन जी बताते हैं की बेटियों की शादियों में बहुत पैसा खर्च हुआ है, जिसका कर्ज वो अभी भी चुका रहे हैं।

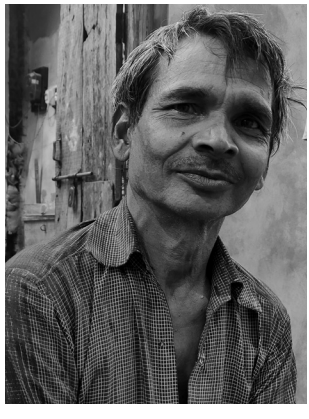

इन्होनें बताया कि लॉकडाउन से पहले वो दिन का 200 से 300 रुपए तक कमाई कर लेते थे। पिछले 6 महीने से उनको कहीं भी काम नही मिला। इस लॉकडाउन के दौरान एक बार सब्ज़ी की रेडी भी लगाई, लेकिन अनुभव और पैसों की कमी के कारण वो काम भी नहीं चल पाया। उलटे वह और कर्ज में डूब गये। कर्ज चुकाने की चिंता में वह काफी समय से मानसिक तौर पर बीमार भी हो गये।

सरकार से कोई भी मदद ना मिलने के कारण बहुत नाराज थे। उन्होंने कहा कि राजनीतिक पार्टी के नेता नौटंकी दिखाने में अच्छे हैं पर जब जनता परेशानी में होती है तो कोई भी सामने नहीं आता। इन्हें भी केवल एक बार सरकारी दुकान से राशन मिला, उसके बाद किसी ने पूछा तक नहीं। अवध पीपल्स फोरम के लोग आकर राशन नहीं देते तो

आज जीवित रहना बहुत मुश्किल होता। निराश होकर ये सोचते हैं कि पता नहीं ये सब कब सही होगा, और कब इन्हें काम मिलेगा।

निष्कर्ष

किसी भी संकट की स्थिति में सरकार की यह जिम्मेदारी और जवाबदेही होती है कि वह मजदूर वर्ग के अधिकारों की रक्षा करे एवं मजदूरों की स्थिति को सुधारने के लिए सकारात्मक प्रयास करें। देशव्यापी लॉकडाउन के दौरान अंसगठित क्षेत्र के मजदूरों की स्थिति काफी दयनीय हो गयी थी, लेकिन सरकार और नीति निर्माताओं ने मजदूर वर्ग की दिक्कतों को न सिर्फ अनदेखा किया बल्कि उनको इस स्थिति में उबारने के लिए कोई सकारात्मक प्रयास भी नही किया। सरकार की गलत प्राथमिकताओं के चलते भारत के मजदूर वर्ग की स्थिति और ज्यादा बिगड़ती चली गयी। अगर देश के अन्य नागरिकों और सामाजिक संगठनों इन मजदूरों वर्गो की सहायता ना करते तो स्थिति और ज्यादा खराब होती।

सरकार ने कोविड-19 के संकट से उबरने के लिए आत्मनिर्भर अभियान के तहत 20 लाख करोड़ रुपये के प्रोत्साहन पैकेज की घोषणाएं तो की, लेकिन जमीनी एवं सामुदायिक स्तर पर लोगो को इस योजना का क्रियान्वयन के बारे में कोई जानकारी नही है।

फैजाबाद शहर में काम करने वाले स्थानीय संगठनों को चाहिए की वह सरकार एवं प्रशासन के साथ बातचीत करे कि इन योजनाओं का जमीनी स्तर पर क्रियान्वयन कैसे हो सकता है। सरकार को छोटे दुकानदारों को कुछ रकम देनी चाहिए ताकि वह अपना व्यवसाय फिर से शुरू कर सके। सरकार को न्यूनतम मजदूरी के कानून का सख्ती से पालन करना चाहिए ताकि रोजाना के आधार पर मजदूरी पाने वाले श्रमिकों को उनका जायज़ मजदूरी मिल सके। मजदूर वर्ग को नियमित स्वास्थय सुविधायें एवं शिक्षा और रोजगार की पूरी जिम्मेदारी सरकार को लेनी चाहिए।

संक्षेप में..

जब हम वापस मुड़कर इन 39 कहानियों को देखते हैं, तो हमें अपने समय की गहरी असमानताओं सामने दिखती हैं। कहानियों को एकत्र करना, संकलित करना और अनुवाद करना यह समझने का एक प्रयास था कि जमीनी स्तर पर स्थिति क्या है, और सुशासन के वादे कहां तक सही हैं। एक तरफ जब हमारी सरकारों ने संकट से निपटने में शानदार सफलता प्राप्त करने का विज्ञापन करने के लिए बड़ी मात्रा में सार्वजनिक धन खर्च किया गया, वहीं लोगों का जीवन गरीबी, भेदभाव और बहिष्कार की घोर स्थिति में फंस गया था।

यह दस्तावेज़ एक समाज के रूप में हमारी अपनी सामूहिक भूलने की बीमारी की भी याद दिलाता है – यह सोचते हुए कि सब कुछ जल्द ही ठीक हो जाता है, और यह कि लॉकडाउन केवल एक असुविधा थी, या यह सोचते हुए कि इसका प्रभाव सीमित था। हमने जो देखा वह यह था कि लॉकडाउन ने ऐसी अप्रत्याशित स्थितियों को संभालने या टालने के लिए सरकारों की तैयारियों में कमी को उजागर कर दिया, जिससे कई जिंदगियों पर पैदा हुए घोर संकट को रोका जा सकता था।

सार्वजनिक स्वास्थ्य प्रणालियों की विफलता, जनता के लिए शिक्षा के अवसरों की कमी, गरीबों के खिलाफ अंतर्निहित भेदभाव – और अधिकांश लोग जो श्रमिक वर्ग से आते हैं – उनके लिए आजीविका बनाए रखने या बनाने में असमर्थ एक ढहती अर्थव्यवस्था – यह कुछ चीजें थीं जिन्हें सरकारें बेहतर संभाल सकती थी। सामाजिक सुरक्षा योजनाएं, या मुफ्त राशन का वितरण, ये सभी उन लोगों की पहुंच से

बाहर थे जिनसे हम मिले और जिनका साक्षात्कार लिया। हम केवल यह आशा कर सकते हैं कि यह देश भर के लोगों के लिए ऐसा नहीं था।

यदि स्थानीय सामाजिक-धार्मिक धर्मार्थ संगठनों, नागरिक समाज समूहों या चिंतित व्यक्तियों ने राशन किटों के वितरण या नकद सहायता के माध्यम से समय पर मदद नहीं की होती, तो बहुत से लोग भूख से मर गये होते – बिना किसी बचत, आय या काम के साधन के। कई श्रमिक वर्ग के परिवार लॉकडाउन लागू होने से पहले की तुलना में सामाजिक और आर्थिक रूप से अधिक असुरक्षित हो गये। यह वह दौर भी था जब सामाजिक रिश्ते तनावपूर्ण थे। गिरती आय और अनिश्चितता के कारण लोगों को बुनियादी जरूरतों के लिए भी अपने मालिकों, ठेकेदारों, दोस्तों और परिवारों से कर्ज़ लेना पड़ा – जिसमें राशन या शिक्षा के लिए इंटरनेट का उपयोग भी शामिल है। बहुत से लोगों ने जीविकोपार्जन के लिए बाहर जाने की कोशिश की – लेकिन पुलिस ने उन्हें पीटा या जब तक अन्यथा न कहा जाए, उन्हें घर पर ही रहने को कहा गया। वास्तव में बहुत कम लोग ऐसे जीवन वहन कर सकते हैं!

लॉकडाउन की अवधि ने हमें सरकारों, अधिकारियों और अन्य लोगों को गरीबों और हाशिए पर रहने वाले समुदायों की जरूरतों के प्रति संवेदनशील होने की जरूरत सिखाई है। हम एक ऐसे सामूहिक भविष्य की आशा करते हैं जहां बड़े पैमाने पर सर्वहारा वर्ग – इस विशाल देश का एक बड़ा हिस्सा – अपने दैनिक जीवन में इतना असुरक्षित ना हो, और हमारे शासक वर्ग उनकी बात सुनना, उनकी देखभाल करना और कार्य करना सीख सकें।